चन्दामामा
जून १९८८
2.50

नागराज का नया धमाका

खूनी जंग

इसी सैट के
अन्य कॉमिक्स

चमत्कारी सेब

विचित्र खोपड़ी

जासूस टोपी चंद
और पैट्रोल की खेती

प्रकाशक : राजा पॉकेट बुक्स 17/36, शक्ति नगर, दिल्ली-110007

Kara/279
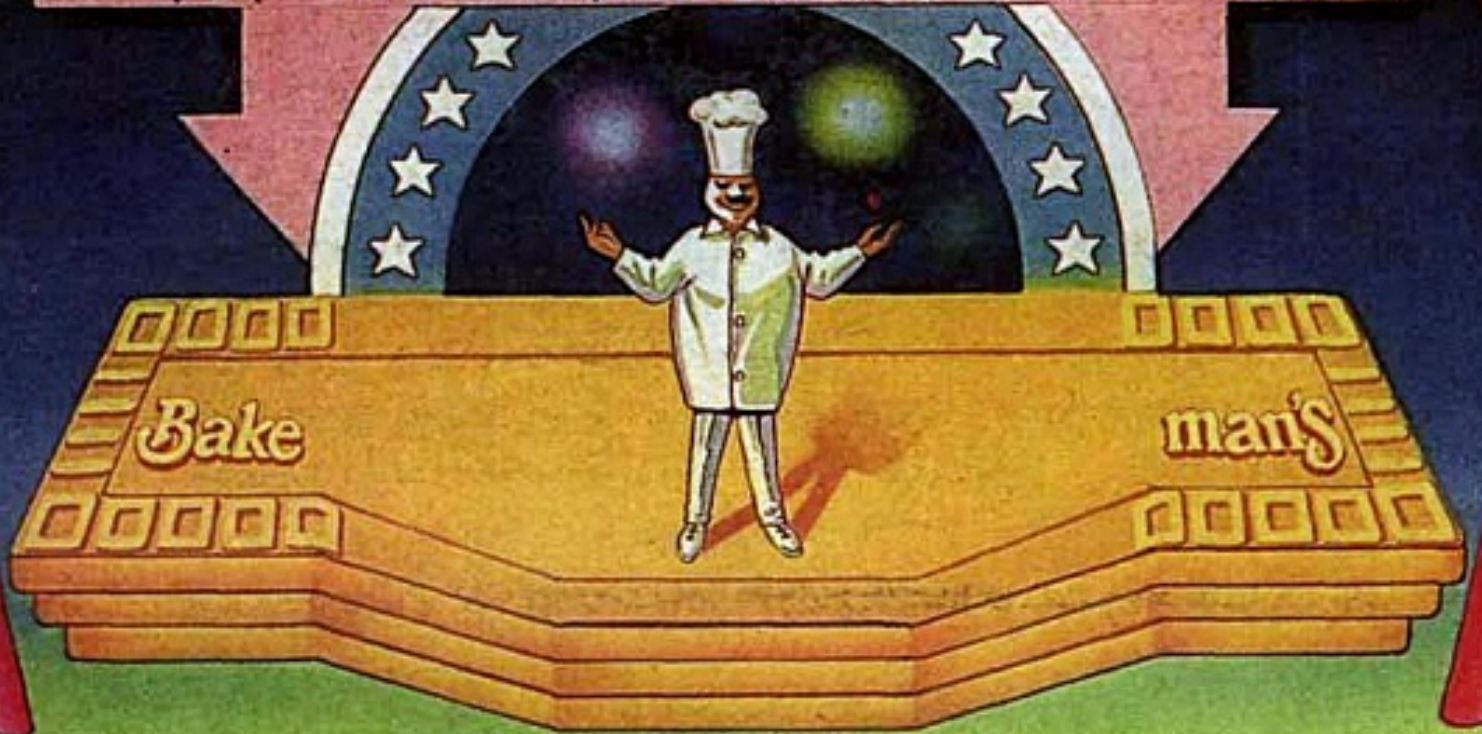
A
मोड़कर "A" और "B" को मिलाओ
B
Bakeman's
Glucose Plus BISCUITS
नया
१०० ग्राम
पैक
Bakeman'S
Home Baked Freshness
नया!
ग्लूकोस
प्लस बिस्कुट
ज़्यादा स्वाद, ज़्यादा ताक़त

नया सेरेलॅक ऑरेन्ज

आपके शिशु के लिए सेरेलॅक का एक और अनूठा लाभ

पेश है नया सेरेलॅक ऑरेन्ज – आपके शिशु को सेरेलॅक लाभ, एक नए स्वाद के साथ देने के लिए। जैसे-जैसे आपका शिशु बढ़ता है, उसके आहार में विविधता आनी चाहिए। उसे यह नया स्वाद बहुत भाएगा... संतरे के गुणों से भरपूर।

और उसे सेरेलॅक ऑरेन्ज देने का मतलब है कि आप उसे सेरेलॅक के सभी लाभ दे रही हैं – प्रत्येक आहार में संपूर्ण पोषाहार, मनभावन स्वाद और झटपट तैयार।

इसलिए, उसे दुग्ध आहार के साथ-साथ सेरेलॅक व्हीट ४ महीने की आयु से और सेरेलॅक ऐपॅल/नया सेरेलॅक ऑरेन्ज छः महीने की आयु से दीजिए – शिशु को सेरेलॅक लाभ देने के तीन स्वादिष्ट तरीके।

कृपया डिब्बे पर दिए गए निर्देशों का सावधानी से पालन कीजिए ताकि इसके बनाने में स्वच्छता रहे और आपके शिशु को मिले स्वस्थ और संतुलित पोषाहार।

Nestlé

R K SWAMY/FSL/4974-HIN

रेनू की सखियों से कट्टी
इसे चढ़ा देतीं वो पट्टी
अब इसने भी सोच लिया है
उनकी ये कर देगी छुट्टी
अपने एको पेन के सेट से
घंटों रंगती फूल औ' तितली
राजा, रानी, गुड्डा, गुड़िया
भूल के सब कुछ अगली पिछली
एको हरे और एको पीले
लाल और ऑरेंज, भूरे, नीले
काले, बैंगनी, वायलेट, गुलाबी
अब तो स्केच पेन एको ही लें.
मुफ़्त!
कलरिंग फ़ोल्डर
EKCO
एको
स्केच पेन
रंगों से यारी, मौज-मस्ती तुम्हारी!
प्रीसिज़न राइटिंग पॉइन्ट्स प्रा. लि. १८, सुभाष रोड, विले पारले (पूर्व), बम्बई-४०० ०५७.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

विवेकशील व्यक्ति कभी आत्मस्तुति नहीं करता है। क्यों कि उस में दूसरों की निन्दा भी निहित होती है। इससे भिन्न प्रवृत्ति उन लोगों की होती है, जो खुद को अत्यन्त बुद्धिमान मानते हैं। उनके व्यवहार और वार्ता में भी ऐसा अहंकार ध्वनित होता कि वे सभी विषयों में कुशल हैं और अन्य लोग मूर्ख हैं। इसका उदाहरण "वचन का पक्का" कहानी है।

अमर वाणी

यत् तदग्रे विषमिव, परिणामे मृतोपमम्,
तत् सुखं सात्त्विकं, प्रोक्तमात्मबुद्धि प्रसादजम्।

[प्रारंभ में विष की भाँति अत्यन्त भयानक होनेपर भी – निर्मल एवं सात्त्विक जीवन के द्वारा प्राप्त होनेवाला सुख, क्रमश: अमृत के समान आनंद प्रदान करता है।

वर्ष : ४० | जून १९८८ | अंक : १०
एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

चंदा मामा बूझ के हारे –
छोटे छोटे, प्यारे प्यारे,
रंगबिरंगे कैसे तारे?
तारे नहीं, ये जेम्स हैं सारे.
Cadbury's GEMS
जो चाहे खेले, जो चाहे खाले.
Cadbury's GEMS

No share prices,
no political fortunes, yet...

Over 40% of Heritage readers are professionals or executives, 61% from households with a professional / executive as the chief wage earner. Half hold a postgraduate degree or a professional diploma.

– from an IMRB survey conducted in Oct. 1986

It's an unusual magazine. It has a vision for today and tomorrow.

It features ancient cities and contemporary fiction, culture and scientific developments, instead of filmstar interviews and political gossip. And it has found a growing readership, an IMRB survey reveals. Professionals, executives and their families are reading The Heritage in depth – 40% from cover to cover, 42% more than half the magazine.

More than 80% of The Heritage readers are reading an issue more than once.

And over 90% are slowly building their own Heritage collection.

Isn't it time you discovered why?

CMR-2155

So much in store, month after month.

मूलधन और ब्याज

श्रीरंगपुर में लक्ष्मीपति नाम का एक दूकानदार था। उस गाँव की अन्य दूकानों की अपेक्षा लक्ष्मीपति की दूकान में अधिक व्यापार चलता था। इस कारण लक्ष्मीपति उस गाँव के मुट्ठी भर धनवानों में एक गिना जाता था। लेकिन वह अन्य धनवानों की भाँति किसी भी स्थिति में अपना धन ब्याज पर नहीं देता था। उस के इस व्यवहार पर लोगों को बड़ा आश्चर्य होता था। प्रति मास लक्ष्मीपति अपनी आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा निकालकर एक तिजोरी में सुरक्षित रखा करता था।

लक्ष्मीपति के पड़ोस में एक महाजन रहा करता था। उसे भी लक्ष्मीपति का व्यवहार कुछ विचित्र-सा लगता था। एक दिन अपनी इस शंका का निवारण करने के विचार से लक्ष्मीपति के पास पहुँचा। उसने पूछा, "देखो लक्ष्मीपति, यह बात सर्वविदित है कि तुमने व्यापार में खूब धनार्जन् किया है। उस धन को तिजोरी में सुरक्षित रखने से फायदा ही क्या है ? मेरी सलाह मानो और मेरे जैसे उस धन को ब्याज पर लगाओ। इस से तुम्हारे मूलधन के साथ ब्याज भी प्राप्त होगा। इस समय तुम धन को जैसे छिपाकर रख रहे हो, उससे तुम्हारा मूलधन मात्र रह जाएगा। तुम नाहक ही ब्याज से वंचित हो रहे हो।"

अपने पड़ोसी की सलाह सुनकर लक्ष्मीपति मंदहास करके बोला, "तुम्हारी समझ के अनुसार मैं उतना मूर्ख नहीं हूँ। मैं हर महीने जितना धन जतन से रखना चाहता हूँ उसमें ब्याज की रकम मिलाकर उतनी रकम ही तिज़ोरी में रखता हूँ।"

वचन का पक्का

ग्रामवासी अक्सर कहा करते हैं कि, 'नारायण भले निर्धन हो, मगर वह है बड़ा घमण्डी !' वह कभी किसी के सामने जाकर हाथ फैलाकर याचना नहीं करता। दूसरों की वह हमेशा मदद करता, लेकिन वह कभी किसीसे कोई मदद नहीं लेता। इसलिये सब लोगों की धारणा थी कि नारायण पौरुष का प्रतीक है।

वही नारायण एक दिन गाँव की चौपाल में गपशप करनेवाले वीरभद्र से मिल कर बोला, "महाशय, आप को मेरी मदद करनी होगी।"

उस समय वीरभद्र चौपाल में बैठे लोगों के सामने अपने खुद के बारे में बढ़ा चढ़ाकर बातें कर रहा था। चूँकि वीरभद्र संपन्न व्यक्ति था, हर कोई किसी न किसी रूप में उस से संपर्क रखता था। इसलिये उसकी बातों का कोई प्रतिवाद किये बिना सब वे बातें सुन रहे थे। और ऐसे में जब नारायण ने उससे परामर्श किया और उसकी सहायता माँगी तो वह फूला नहीं समाया।

"कहो भाई, तुम जो भी मदद माँगोगे और जो भी मुझ से होगा, मैं तुम्हारे लिये अवश्य करूँगा।" वीरभद्र ने नारायण की ओर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि दौड़ाते हुए कहा।

"मेरी बेटी की शादी के लिये मुझे तीन सौ रुपयों की ज़रूरत है।" नारायण इस के आगे कुछ बोलने ही वाला था, तो वीरभद्र मुस्कुराकर बोला, "अरे भाई, यह कौन बड़ी बात है ? तीन सौ वैसे ही ले लो। तुम जैसा सज्जन रुपये माँगे और मैं कहीं इनकार करूँ ?"

"महाशय, आप को रुपये देने की ज़रूरत नहीं है। मैं सेठ साहब के यहाँ से उधार ले रहा हूँ। लेकिन सेठजी कहते हैं कि आप जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति ज़मानत दे दें, तभी वे मुझे कर्ज़ देंगे।" नारायण ने कहा।

"तीन सौ रुपयों के लिये ज़मानत ? इतनी

छोटी रक़म के लिये सेठजी के पास जाने की क्या ज़रूरत ? मैं खुद रकम दे दूँगा ।" वीरभद्र ने समझाया ।

"नहीं साहब, आप तो मुझ से सूद नहीं लेंगे । बिना सूद के रुपया लूँ तो मुझे अच्छा नहीं लगेगा ।" नारायण अपनी बात पर अड़ा रहा ।

वीरभद्र ने नारायण पर खूब ज़ोर डाला कि वह स्वयं उसे रकम देगा, मगर नारायण ने उसकी एक न मानी । उसने कहा, "आप अगर ज़मानत देना नहीं चाहते, तो मैं किसी और सज्जन से अनुरोध करूँगा ।"

यह कोरा जवाब सुनकर वीरभद्र कुछ सकपकाया, फिर बोला, "तुम्हें कोई ज़मानत न देगा । तुम क्या किसी से पूछे बगैर ही पहले-पहल सीधे मेरे पास आये हो ?"

"खुदा की कसम ! मैं सब से पहले आप ही के पास आया हूँ ।" नारायण ने विनयपूर्वक कहा ।

वीरभद्र इसपर संतोषपूर्वक सिर हिलाकर बोला, "नारायण, तुम तो कभी किसी से मदद नहीं माँगते और इस प्रकार अपने पौरुष की रक्षा करते आये हो । इस गाँव में तुम्हारे स्वाभिमान के खूब चर्चे हैं । ऐसे व्यक्ति तुम, जब पहली ही बार मदद की ज़रूरत पड़ी तो सीधे मेरे ही पास आये हो । इस गाँव में इतने सारे लोगों के होते हुए तुम जो मेरे पास आये हो, इस के पीछे भी कोई खास कारण होगा ही । वह कारण तो बताओ मुझे, ताकि सब लोग सुन लें !"

वीरभद्र की इस बातों के पीछे एक कारण

अवश्य था—जो नारायण साधारणतः किसी की प्रशंसा नहीं करता, उसे अब जब मदद की ज़रूरत पड़ी है तो वह ज़रूर वीरभद्र की तारीफ़ करेगा और चौपाल में हाज़िर सब लोग वह नारायण की ज़बानी सुनेंगे ।—यही वीरभद्र की कामना थी ।

इतनी छोटी सी बात को लेकर वीरभद्र का इतना हंगामा करना नारायण को बहुत अख़रा । मगर वह अपने मन की बात को प्रकट किये बिना बोला, "यह बात मैं पहले प्रकट नहीं करना चाहता । मेरा काम सफल बन जाए, तब मैं बताऊँगा ।"

"तुम चाहे जब कहो, तुम्हें वह बात सब के सामने कहनी होगी ।" वीरभद्र ने अपनी शर्त सुनाई ।

नारायण ने यह शर्त मान ली । वीरभद्र ने तत्काल सेठजी को बुलवाकर कहा, "सेठजी, नारायण को आप तीन सौ रुपये उधार दीजिए । मैं ज़मानत देता हूँ ।"

सेठजी ने स्वीकृतिसूचक गर्दन हिलायी । और इसके बाद नारायण की बेटी की शादी सफलतापूर्वक संपन्न हुई । इसके एक हफ्ते बाद नारायण ने सेठजी की रकम सूद-सहित चुकायी और यह ख़बर देने के लिये वह वीरभद्र के पास पहुँचा । उस समय भी वीरभद्र चौपाल के पास लोगों में अपनी डींग हाँक रहा था ।

नारायण की बात सुनकर वीरभद्र ने विस्मय में आकर पूछा, "तुम ने इतनी जल्दी उधार कैसे चुकाया ?"

"महानुभाव, मैं अपनी बेटी की शादी के

चौपाल ने एकत्रित सब लोग इस पर एकदम खिलखिलाकर हँस पड़े ।

वीरभद्र मंद मंद मुस्कुराता हुआ बोला, "हाँ, बात सच है । तुम अपने बचन का पालन करनेवाले ईमानदार व्यक्ति हो । लेकिन तुम ने मुझे वचन दिया था कि तुम यह बात भी खोल दोगे कि, ज़मानत देने की बात पूछने तुम सब से पहले मेरे ही पास क्यों आये ? तो फिर अपने उस वचन का पालन करो न ।"

"क्यों नहीं ? महाशय, मैं ये बातें केवल आप ही को सुनाऊँ या इन सब के सामने ?" नारायण ने पूछा ।

"सब के सामने बताओ ।" वीरभद्र ने कहा ।

"तब तो महाशयों, सुंन लीजिए । मैं बड़ा स्वाभिमानी व्यक्ति हूँ । मैं ने आज तक किसी बात के लिये किसी के सामने हाथ नहीं फैलाया । ऐसे मैंने एक बुज़ुर्ग की इज्जत बचाने के लिये सेठजी से कर्ज़ लेना चाहा, तो सेठजी ने मुझ से ज़मानत के लिये कहा । आप ने मुझ से कहा कि आप बिना सूद के ही मुझे उधार देंगे, फिर भी मैंने आप से केवल ज़मानत ही माँगी, रुपये नहीं माँगे । आप ने ज़मानत दी, तो आप की भी इज्जत बची रहे इस ख़याल से अपने बेटी के विवाह के एक सप्ताह के पश्चात् सेठजी का ऋण चुका दिया ।" नारायण ने स्पष्ट किया ।

"सुनो, तुम तो अपने ही बारे में बता रहे हो, लेकिन मेरे बारे में कुछ भी नहीं कहा ?" वीरभद्र ने पूछा ।

लिये थोड़ा-थोड़ा धन जमा करता रहा था । मैं ने उस रकम को एक बुज़ुर्ग के पास हिफ़ाज़त से रखने के लिये सौंप दी थी । उस बुज़ुर्ग ने अपनी ज़रूरत के लिये उसमें से कुछ धन का उपयोग किया और मुझ से मिन्नत की, कि मैं यह बात किसीपर प्रकट न करूँ । इसलिये मुझे रुपयों की ज़रूरत आ पड़ी । अब उस बुज़ुर्ग ने मेरा धन लौटाया है; इसलिये मैं ने अपना उधार भी चुका दिया । हो गया आपका समाधान ?"

"एक गरीब का धन अपने काम में लानेवाला वह बुज़ुर्ग कौन है ?" वीरभद्र ने गुस्से में आकर पूछा ।

"मैं ने वचन दिया है, इसलिये उन का नाम प्रकट नहीं करूँगा ।" नारायण ने कहा ।

नारायण पलभर रुककर बोला, "महाशय, इस घटना में मेरे बारे में कहने को बहुत कुछ है, मगर आप के बारे में कहने के लिये क्या है ? मैं स्वाभिमानी हूँ, पर बुज़ुर्गों की प्रतिष्ठा बचाये रखने के लिये उस स्वाभिमान को भी मैं बलि चढ़ा सकता हूँ। जो ज़मानत देते हैं, उन को ज़मानत देने का श्रेय मिल ज़ाता है और उन का कोई नुक़सान भी नहीं होता। मैं ने कभी किसी के सामने जाकर किसी प्रकार की मदद की याचना नहीं की, ऐसा व्यक्ति—यदि पहली बार आप के सामने जाकर मदद माँगता है, तो यह आप ही का सौभाग्य है। आप बड़े ही भाग्यवान हैं। इसीलिये मैं आप के पास आया हूँ।"

वीरभद्र ने चकित होकर पूछा, "क्या तुम मेरे बारे में ये ही बातें कहना चाहते हो ? मेरी मदद पाकर भी तुम अपने को ही मुझ से बड़ा आदमी मानते हो ?"

"महाशय, मैं संकोचशील व्यक्ति हूँ। आप ने पूछा, इसलिये मैं ने बताया। मेरे बारे में अगर कोई मुझ से कुछ नहीं पूछता, तो मैं खुद अपने बारे में कुछ नहीं सुनाता। पूछने का भी मैं किसी से अनुरोध नहीं करता।" नारायण ने अच्छी उलाहना दी।

"मुझे अगर पहले से ही मालूम होता कि तुम कुछ ऐसे विचार रखनेवाले आदमी हो, तो मैं तुम्हें बिलकुल ज़मानत न देता।" वीरभद्र ने गुस्से में आकर कहा।

नारायण वहाँ से निकलने को होकर बोला, "इसीलिये ही तो मैं ने आप से कहा था कि कार्य के समाप्त होने पर ही मैं असली कारण बताऊँगा।" इतना कहकर वह वहाँ से चल पड़ा।

एक बुज़ुर्ग ने नारायण के पैसों का उपयोग किया; तिसपर भी नारायण ने गुप्त रूप से उसकी मर्यादा की रक्षा की। ऐसा ईमानदार व्यक्ति यदि उधार के लिये ज़मानत माँगता है, तो वीरभद्र ने ऐसा हंगामा मचाया, मानो उसने कोई बहुत महान् कार्य संपन्न किया है।

इस तथ्य को समझने को पश्चात् वीरभद्र ने चौपाल में बैठकर आत्मस्तुति करने की आदत छोड़ दी।

चंद्रपुर नामक राज्य पर राजा चंद्रसेन राज्य करता था। उस के पड़ोस में चक्रगिरी राज्य था, जिसका शासक चित्रकेतु नाम का राजा था। इन दो राज्यों में अनेक वर्षों से बराबर शत्रुता चली आ रही थी।

एक बार राजा चित्रकेतु ने बिना कोई युद्ध की घोषणा दिये अचानक चंद्रपुर राज्य पर हमला कर दिया। दोनों पक्षों के बीच भयंकर युद्ध छिड़ गया। उस युद्ध में चित्रकेतु पराजित होकर जंगलों में भाग गया। चक्रगिरी का राज्य चंद्रसेन के वश में आ गया।

लेकिन इस युद्ध में चंद्रपुर का सेनापति काम आया। उप-सेनापति शक्तिवर्मा अत्यन्त घायल हो गया। राजवैद्यों ने इलाज करके उसके प्राण तो बचाये, पर शल्यचिकित्सा करके उसका एक पैर काटकर निकालना पड़ा।

इस हालत में चंद्रगिरि राज्य के लिए नया सेनापति नियुक्त करने की आवश्यकता आ पड़ी। इस संदर्भ में राजा तथा मंत्री ने शक्तिवर्मा की सलाह माँगी।

"महाराज, हमारे दलपतियों में साहस एवं पराक्रम के साथ युद्धतंत्र अच्छी तरह से जानने वाले कुछ युवक भी हैं। उन के बीच प्रतियोगिता रखकर विजयी युवक को सेनापति के पद पर नियुक्त कीजिए।" शक्तिवर्मा ने सलाह दी।

राजा ने यह कार्य शक्तिवर्मा तथा मंत्री को सौंप दिया। उन्होंने दलपतियों के बीच भिन्न भिन्न प्रतियोगिताएँ चलायीं। उन में दो युवक सभी प्रतियोगिताओं में सफल हुए। दोनों के गुण बराबर हुए। उनमें से एक का नाम था जय और दूसरे का विजय।

अब मंत्री और शक्तिवर्मा के सामने यह समस्या खड़ी थी कि इन दोनों में से किस को सेनापति-पद दिया जाये। मंत्री ने इस समस्या पर

रामचंद्रन

कुछ अधिक विचार किया और शक्तिवर्मा को एक उपाय बताकर वहाँ से चला गया ।

दूसरे दिन जय मंत्री से मिलने गया । मंत्री ने कहा, "राजा ने तुम को सेनापति के पद पर नियुक्त करने का आदेश दिया है । तुम्हें अपने कर्तव्यपालन में पुराने सेनापति से बढ़कर अपनी दक्षता दिखानी होगी विजय ।"

मंत्री की बातें सुनकर जय घबराकर बोला, "महामंत्रीजी, मेरा नाम विजय नहीं, जय है ।"

"अरे, शक्तिवर्मा ने तो मेरे पास खबर भेजी है कि विजय का चुनाव करके उसको मेरे पास भेज रहे हैं ।" मंत्री ने कहा ।

"इसमें कोई भूल हो गयी है । मैं अभी जाकर शक्तिवर्मा को आप के पास ले आता हूँ ।" यह कहकर जय वहाँ से चला गया ।

थोड़ी देर बाद मंत्री के पास विजय आया । मंत्री ने उस की ओर भी परखकर देखा और कहा, "राजा की आज्ञा हुई है, कि इसी क्षण से तुम चंद्रपुर राज्य के सेनापति हो । हे जय, तुम्हें अपने कर्तव्यपालन में पुराने सेनापति से कहीं अधिक दक्षता दिखानी होगी ।"

मंत्री की बातें सुनकर विजय को आश्चर्य हुआ । वह बोला, "महामंत्रीजी, ऐसा लगता है, कि इस चुनाव में कोई भूल हुई है । शक्तिवर्मा ने मुझ से कहा कि मुझे ही सेनापति-पद के लिए चुना गया है, अतः मैं आप से मिल लूँ । उन्होंने यह भी कहा कि इस संबंध में उन्होंने आप के पास आवश्यक समाचार भी भेजा है । मेरा नाम जय नहीं है । मेरे और जय के नाम में केवल एक वर्ण का ही अंतर है, इसलिए संभवतः आप के सुनने में कोई त्रुटि हो गयी होगी ।" यह कहकर उसने पहरेदार को बुलाकर आदेश दिया, "अरे, तुम अभी शक्तिवर्मा के पास जाकर उन से यह कहकर कि नये सेनापति विजय उनको बुला रहे हैं, इसी क्षण यहाँ पर ले आओ ।"

यह उसका उत्तर पाकर और उसकी मुस्तैदी देखकर मंत्री ने संतुष्टिपूर्वक सिर हिलाया और मन्द हास करके कहा, "विजय, इस में कोई भूल नहीं हुई है । आज से तुम ही इस राज्य के सेनापति हो ।"

हाज़िर जवाबी

एक बार एक राजा जंगल में शिकार खेलने गया। उसके साथ सिपाही थे और विदूषक भी। सबेरे से दोपहर एक बजे एक बहुत खोज बीन करने पर भी उन्हें एकाध भी खूँख़ार जानवर नज़र नहीं आया। आख़िर कुछ पेड़ के पत्ते चरता हुआ एक हिरन-शावक राजा को दिखाई दिया।

राजा ने बड़ी आतुरता के साथ धनुषपर बाण चढ़ाकर उसपर छोड़ दिया। पर धनुष का निशान चूक गया।

इसे देखकर विदूषक बोला, "शाबाश महाराज!" इसपर क्रोध में आकर राजा ने कहा, "ऐसी प्रशंसा को मैं अपमानसूचक समझता हूँ।"

तब विदूषक झट बोला, "महाराज, मैंने आप की धनुर्विद्या की तारीफ़ नहीं की; बल्कि आप की कृपा और करुणा की तारीफ़ की।"

इसपर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और अपना कण्ठहार उतारकर विदूषक को भेंट किया।

७

[ज्ञान भूमि से अदृश्य होकर जयराज एक नये प्रदेश में पहाड़ पर स्थित गुफ़ा के अन्दर एक मुनि के समक्ष पहुँचा। मुनि और जयराज गुफ़ा से बाहर निकले और पहाड़ की तलहटी में स्थित नगर में अदृश्य रूप में ही वहाँ के दृश्य देखते एक मन्दिर के प्रांगण में पहुँचे। मन्दिर के द्वार बन्द किये गये .... आगे पढ़िये।]

मन्दिर में उपस्थित लोगों में जो ऊँचाई में सब से ज़्यादा था, बोल उठा, "सौभाग्य से इस वर्ष भी हम लोग सब 'पापों' को पकड़कर बन्दी बना सके। वे सब दृढकाय है। यह आहार पाकर हमारी देवी बहुत ही प्रसन्न होगी।"

"हम एक बार उन्हें देख लें ?" नायक ने कहा।

इस पर वह लम्बा व्यक्ति सब को एक कटघरे के पास ले गया, तीन दृढकाय व्यक्तियों की ओर इशारा करके वह बोला, "यह है काम, और वह वहाँ क्रोध; घबड़ाई दृष्टि से देखनेवाला वह लम्बी दाढ़ीवाला जो है न, वह है लोभ। समझे ? ये सब बड़े ज़ालिम है। मनुष्य को मनुष्य नहीं 'पापों का देवता' बना देते हैं। इन्हें सज़ा देनी चाहिये। जब तक ये ज़िन्दा रहेंगे, हमारी ख़ैरियत नहीं!"

इसके बाद अधिकारियों ने चमकनेवाली उस लम्बी तलवार को देखा, जिससे वे तीनों बलि चढ़नेवाले थे।

मनोज दास

"मैं अपने मन के काम, क्रोध और लोभ आदि दुर्गुणों को देवी के समक्ष त्यागनेवाला हूँ।" लम्बे व्यक्ति ने कहा।

मुनि ने यह देखकर क्रोधावेश में आकर कहा, "इस नगर का सर्वनाश करना होगा।"

मुनि का कहना जयराज को छोड़ और किसीको भी सुनाई नहीं दिया। जयराज ने उसकी ओर विस्मय से देखा।

"ये दुष्ट लोग दूसरे प्रदेश के भोले भाले लोगों को बन्दी बनाकर इन्हें काम, क्रोध आदि नाम देकर देवी के सामने इनकी बलि चढ़ा रहे हैं। सत्कर्म तो इन से किया नहीं जाता। बस, बेढंगे कार्यकलाप में लगे रहे हैं। भोले-भाले लोगों को बलि चढ़ाकर भला इन को कभी सद्बुद्धि होगी कि नहीं। भगवान् इन को सद्बुद्धि दें यही मेरी कामना है।" यह कहकर मुनि नाराज़ होकर मन्दिर का अहाता छोड़कर बाहर चला आया।

और थोड़ी देर नगर-संचार करने पर उनको कई और बातें अवगत हुई।

नगर में तरबूज़े का व्यापार जोरों से चल रहा था। हर दिन शाम को नगर का नायक पहाड़ पर चला जाता और पड़ोस प्रदेशों से आये हुए लोगों को मिलाकर जितने लोगों के लिये तरबूज़े की आवश्यकता होती, वह संख्या बता कर लौट आता।

तरबूज़े का अद्भुत ढंग से प्रत्यक्ष होने का तरीका और उसका स्वाद प्रतिदिन हज़ारों लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता था। उदयकालीन सूर्य की किरणों से शोभित विचित्र तरबूज़े को देखने और उसका एक टुकड़ा लेने के लिये आनेवाले पड़ोसी ग्रामवासियों से ये लोग मनमानी क़ीमत वसूल करते थे। इस प्रकार अपने पूर्वजों को प्राप्त वरदान का लाभ उठाकर आसानी से धनार्जन करते हुए वे दिनभर सो जाते और प्रतिवर्ष पड़ोस प्रान्तों से कुछ अलग अलग दुर्गुणों के नाम देकर नगर की देवी के सामने उनकी बलि चढ़ाते थे और उत्सव मनाते थे। चाहे जिस दाम पर तरबूज़ के टुकड़े बेचने का इन को किस ने अधिकार दिया था? निठल्ले मुफ़्त में धन कमाने करते थे। अपने बाप-दादों की कमाई पर ज़िंदा

रहना चाहते थे !

सूर्यास्त के समय तक मुनि और जयराज नगर-संचार समाप्त कर पहाड़पर पहुँचे । तरबूज़े की बेल के पाश्‍र्व में स्थित चट्टान पर वे दोनों बैठ गये । थोड़ी देर बाद भड़कीले वस्त्र धारण कर पहाड़पर आनेवाला नायक उन्हें दिखाई दिया । वह युवा नायक उत्साहपूर्वक सीटी बजाता हुआ पहाड़पर आ पहुँचा और गुफ़ा के द्वार पर बन्द चट्टान को एक तरफ़ गिरी हुई देख आश्चर्य में आ गया । इसके बाद गुफ़ा में झाँककर उच्च स्वर में बोला, "कल बीस हज़ार लोगों को खाने लायक तरबूज़ चाहिये ।"

"बीस हज़ार लोगों के लिये ? क्या तुम्हारे नगर की आबादी इतनी है ? तुम्हारे नगर की आबादी इस तरह दिन दूनी रात चौगुनी कैसे बढ़ रही है ? या झूठ ही बक रहे हो ?" मुनि ने पूछा

नायक ने पीछे मुड़कर चट्टान पर बैठे मुनि को देखा । जयराज उसकी बगल में खड़ा था ।

"आप लोग कौन हैं ? यहाँ पर आपका क्या काम है ? आप पहाड़ पर कैसे आ गये ? आप को मालूम नहीं—यहाँ पर आने की किसी को भी इजाज़त नहीं है ?" नायक उन को डाँटने लगा ।

"लो, उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे ! तुम्हारी यह हिम्मत ? क्या तुम नहीं जानते ? इस गुफ़ा में एक मुनि रहा करता था और उसी ने इस विचित्र तरबूजे को प्राप्त करने का वरदान दिया था ?" मुनि ने पूछा ।

मैंने यह बात ज़रूर अपने बापदादाओं से सुनी है । लेकिन मैं ने तो उसे एक दंतकथा

समझा था। जो बात अपनी आँखों से नहीं देखी, उस पर कोई कैसे विश्वास करे ? हाँ, अब आप कहते हैं, तो इसे मान सकते हैं। " नायक ने उत्तर दिया ।

"हर दिन तरबूज़े का प्रत्यक्ष हो जाना सत्य है; तो उस मुनि के द्वारा दिया गया वरदान दन्तकथा कैसे हो सकती है, समझाओगे ? रोज़ तरबूज़ पाते हो। खाकर अपनी भूख-प्यास मिटाते हो। तरबूज़ खाने के लिये अपने आस-पास के लोगों को भी न्योता देना शुरू किया है क्या ? वरना ये बीस हज़ार लोग कैसे !" मुनि ने फिर पूछा ।

नायक इस प्रश्न का कोई उत्तर न दे सका।

मुनि ने जयराज की ओर मुड़कर कहा, "वत्स, आज की स्थिति यह है। लोग फूलों की शोभा देख आनन्दित होते हैं, मगर इन फूलों की सृष्टि करनेवाले सृष्टिकर्ता के बारे में कभी सोचते-विचारते नहीं ।"

इसपर नायक मुस्कुराकर बोला, "महात्मा, आपका गुफ़ा से बाहर निकलना हमारे लिये अत्यंत आनन्द की बात है। आजतक आप ने गुफ़ा में जीवन बिताया है , अब आज से हम आप के लिये समस्त सुख-सुविधाओं से पूर्ण अद्भुत महल का प्रबन्ध करेंगे। अनेक सालों से आपने कुछ आहार तक नहीं किया होगा। आप मेरे साथ चलिये तो, आप के लिये सभी प्रकार के मिष्टान्नों का प्रबन्ध करूँगा ।"

"तुमने पहले मेरी बातका जवाब दिया नहीं और कैसी घुमा-फिराकर बातें कर रहे हो ? साफ़-साफ़ बता दो; तुम्हारे लिये बीस हज़ार व्यक्तियों को खाने के लायक तरबूज़े की क्या आवश्यकता है ?" मुंनि ने क्रोध से पूछा ।

"हम यहाँ के नगरवासी पंद्रह हज़ार हैं। और अड़ोस-पड़ोस से गाँवों से आज कोई पाँच हज़ार लोग आये हुए हैं—उनको भी तरबूज़ की आवश्यकता है। इस के हिसाब से हम उन लोगों से पैसे वसूल करेंगे। चाहे तो आप को भी उस आमदनी में से एक हिस्सा दे देंगे। मेरे मन में एक बढ़िया विचार उत्पन्न हो गया है। तरबूज़े के साथ आप भी थोड़ी देर के लिये पहाड़ पर बैठकर दर्शन दें, तो उस दृश्य को दिखाकर हम आसानी से और अधिक धन वसूल कर सकते हैं।

कहिये, आप का क्या विचार है ?" नायक ने बड़े उत्साह में आकर पूछा ।

"चुप रहो ।" मुनि ने चिल्लाकर कहा ।

इसके बाद थोड़ी देर मुनि मौन बैठा रहा । सूर्यास्त होने को था और सभी पक्षीगण अपने अपने घोंसलों में लौट रहे थे ।

मुनि के मन में विचार आ रहे थे—'पहाड़ पर तरबूज़े की सृष्टि करके अद्भुत का प्रदर्शन करें, तो उसके पीछे स्थित दिव्य शक्ति को पहचानकर ये लोग ईश्वरभक्ति में लीन होंगे यही मेरा विचार था । मगर प्रतिदिन सूर्य, चन्द्र, तथा अंतरिक्ष में लटकनेवाले असंख्य ग्रहगोलों को देखने पर भी इनके मन में अद्भुत रहस्य का बोध नहीं हुआ—ऐसी स्थिति में एक विचित्र तरबूज़े को देख, उसके पीछे स्थित परमार्थ को समझने की ये लोग कोशिश करेंगे—ऐसी अपेक्षा रखने में मेरी ही ग़लती है ।' यह विचार आते ही मुनि अपने आप में दुखी होने लगा ।

थोडी देर बाद मुनि की भृकुटियाँ तन गयीं । "कल मैं तुम लोगों के लिये एक विशाल तरबूज़े की सृष्टि करूँगा । वह फटकर टुकड़े-टुकड़े हों तुम लोगों पर गिर जाएगा । वही तुम्हारे नगर का सर्वनाश करेगा । अब तुम जा सकते हो ।" मुनि ने नायक को आदेश दिया ।

नायक पहाड़पर से उतरकर नगर की ओर चल पड़ा ।

"महात्मन्, मुझे लगता है कि आप की यह धमकी इन लोगों में बहुत बड़ा परिवर्तन लाएगी ।

ये लोग अपनी भूल समझ जाएँगे । मुझे ऐसा भी लगता है कि 'आजतक मिले अपूर्व अवसर का हम लोगों ने दुरुपयोग किया और अपने पैरोंपर कुल्हाड़ी मारने जैसा बर्ताव किया' यह समझकर ये लोग पछताएँगे ।" जयराज ने कहा ।

मैं नहीं मानता कि, इन लोगों में इतने शीघ्र कोई परिवर्तन आएगा । पागलपन भी पचासों प्रकार का होता है । चाहो अभी जाकर तुम देख आओ-वे लोग इस वक्त क्या कर रहे हैं ।" मुनि ने जयराज को आवाहन-सा किया ।

जयराज फिर अकेला ही पहाड़ से उतरकर नगर में पहुँचा । वह पूर्णिमा का दिन था । शुभ्र ज्योत्स्ना चारों ओर छिटक रही थी । नगर के बीच स्थित एक विशाल मैदान में जनता एकत्रित
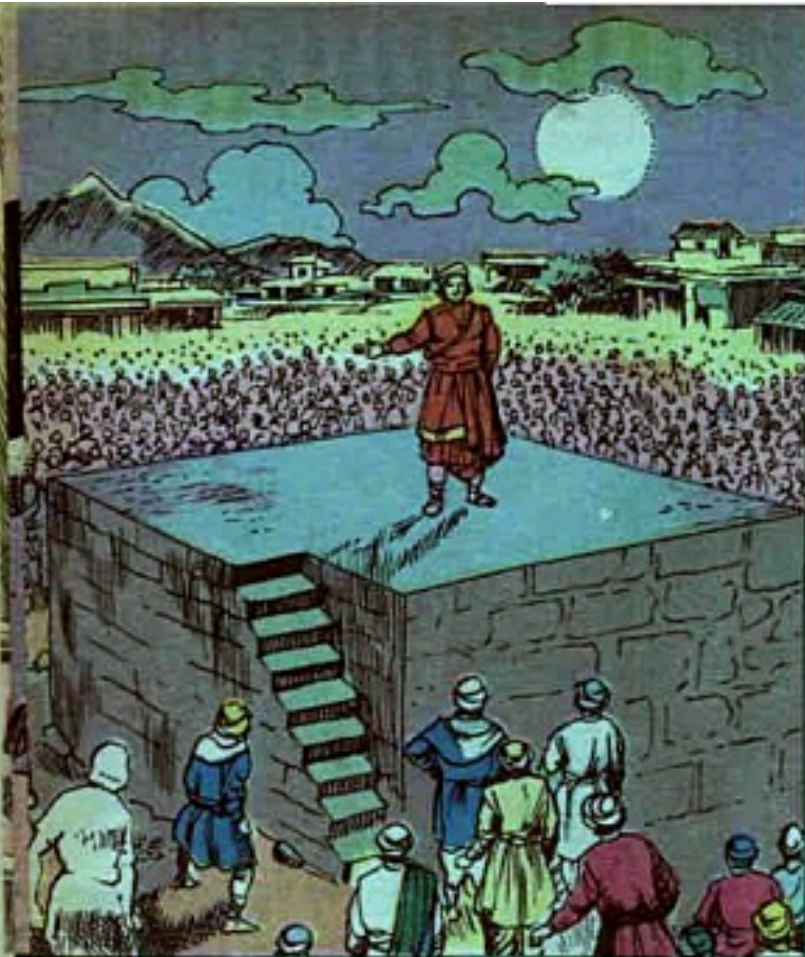
थी। एक मंचपर खड़े होकर नायक भाषण दे रहा था ।

विनोद उस भीड़ के समीप पहुँचा । नायक कह रहा था—

"मुनि की चुनौती का हमें किसी न किसी प्रकार सामना करना होगा । उसकी योजना को विफल बनाने की कोशिश हमें करनी है । इसका एक ही उपाय है—कल प्रातःकाल हमारे नगर के सभी लोगों के साथ चारों तरफ़ से आये ग्रामवासियों को भी पहाड़ के पास पहुँचना होगा। पहाड़ पर से तरबूज़ा ज्यों ही फटकर नीचे गिरेगा, त्यों ही उसके टुकडों को हमें खा जाना चाहिये । फिर हम देख लेंगे कि तरबूज़े के टुकड़े हमारे नगर का सर्वनाश कैसे कर सकते हैं ।"

नायक का भाषण सुनकर सब लोगों ने अत्यन्त उत्साह के साथ अनुमोदन की मुद्रा में सिर हिलाये ।

उसी क्षण से सब के सब दूसरे दिन सबेरे उपस्थित होनेवाले खतरे का सामना करने के लिये सन्नद्ध होने लगे । सबेरे तरबूज़ के टुकडे अधिक मात्रा में खाने के विचार से उस रात को उपवास करने का निश्चय उन लोगों ने किया । अड़ोस-पड़ोस के प्रदेशों से आये सभी लोग दूसरे दिन के प्रातःकाल का इंतज़ार करने लगे ।

उस नगर की जनता के अज्ञान पर तरस खाते हुए जयराज मुनि के पास पहुँचा; तबतक आधी रात बीत चुकी थी ।

पूरब में अरुण किरणें फूट निकलीं और जनता हज़ारों की तादाद में पहाड़ की तलहटी में इकट्ठी हो, मुँह खोले विस्मयपूर्वक पंक्तिबद्ध हो खड़ी हो गयी । और पहाड़ पर लगभग उसी आकार का एक विशाल तरबूज़ा सूर्य की रोशनी में आँखों को चकाचौंध करता हुआ प्रजा के हृदय में एक साथ भय और उत्सुकता पैदा करता हुआ दृष्टिगोचर हुआ ।

अचानक वह तरबूज़ हज़ारों टुकड़ों में फटकर जनता पर गिर पड़ा । जनता मानो होड़ लगाकर उन टुकड़ों को खाने लगी । नीचे बहनेवाला रस भी चुल्लुओं में भरभरकर उन्हों ने पी डाला । एक घंटे के अन्दर जहाँ तहाँ तरबूजे के छिलके मात्र नज़र आने लगे ।

इसके बाद जनता एक जगह इकट्ठा हुई और

आत्मस्तुति करते हुए उन लोगों ने एक प्रस्ताव पारित किया ।

थोड़ी देर बाद अड़ोस-पड़ोस के गाँवों के लोग धीरे धीरे वहाँ से चल पड़े । मध्यान्ह तक पहाड़ की तलहटी का प्रदेश वीरान सा हो गया । नगर की वीथियों में भी जनता का संचार कम हो गया ।

शहर में एक प्रकार की उदासी छा गई । जाने किस चिन्ता ने लोगों को घेर रखा था ।

नगर के कुछ लोगों ने लालच में आकर तरबूज़े के अत्यधिक टुकड़े खाये थे—वे बदहज़मी के शिकार हो गये । कल से तरबूज़े का निर्माण बन्द होगा, तो अब अपना आहार कल से क्या होगा—यह चिन्ता कुछ लोगों को सताने लगी । उनकी जानकारी में कई पीढ़ियों से तरबूज़े का व्यापार ही उनकी आजीविका का एक मात्र साधन था ।अब उनके सामने यह समस्या खड़ी हो गयी कि कल से अपना जीवन कैसे बिताएँ ।

काम करने की आदत तो बरसों से छूट गयी थी । मुफ़्त में तरबूज़ा मिलता था । अब काम करें तो क्या करें यही समस्या सब के सामने थी । अलग अलग लोग अलग अलग योजनाओं के बारे में सोचने लगे । पर कोई निश्चित नहीं हो रही थी । सब से प्रमुख समस्या तो थी कल के भोजन की । कल तरबूज़ा नहीं मिलेगा तो खाएँगे क्या ?

उनमें से कुछ बुज़ुर्गों ने कहा, "सुनो भाइयों, मुनि ने कहा था कि तरबूज़ा नगर का सर्वनाश करेगा । इसका मतलब यह नहीं कि फटनेवाला तरबूजा पूरे नगर का एक साथ सर्वनाश करेगा—इसका मतलब केवल इतना ही है कि, यह फटनेवाला तरबूज़ा अंतिम तरबूज़ा है । इसके बाद जनता को तरबूज़ खाने को नहीं मिलेगा और कल से यह नगर धीरे धीरे विनाश की ओर जाता रहेगा ।"

शाम हो गयी थी—प्रातःकाल से अदृश्य रहकर इन विशेषों को देखकर जयराज और मुनि चिंता से भरी नगर की प्रजा को छोड़कर अदृश्य रूप में ही उन से दूर निकल गये ।

(क्रमशः)

अनोखा फ़ैसला

दृढ़व्रती विक्रमार्क फिर पेड़ के पास लौट आये। पेड़ की डाल से शव को उतारकर कंधे पर रखकर हमेशा की भाँती वे स्मशान की ओर चल पड़े। शव में वास करनेवाले बेताल ने इस पर पूछा, "राजन्, इस भयानक स्मशान में अर्धरात्री के समय इतने कष्ट उठाकर आप जो कार्य साधने की कामना कर रहे हैं, वह आपके निजी काम के लिये, कि आप के सगे-संबंधियों के लिये ही है? इस बात का क्या भरोसा कि कार्य सफल होने पर वे लोग आप के प्रति आदर व सम्मान की भावना ही रखेंगे ? इस बात की पुष्टि के लिये मैं आप को एक राजा और उसके पुत्र की कहानी सुनाता हूँ, गौर से सुनिये; आप अपने श्रम भी भूल जायेंगे।

बेताल अपनी कहानी सुनाने लगा—

प्राचीन काल की कहानी है। महेंद्रगिरी में राजा पद्मपाद राज्य करते थे। उसके बेटे का नाम

बेताल कथा
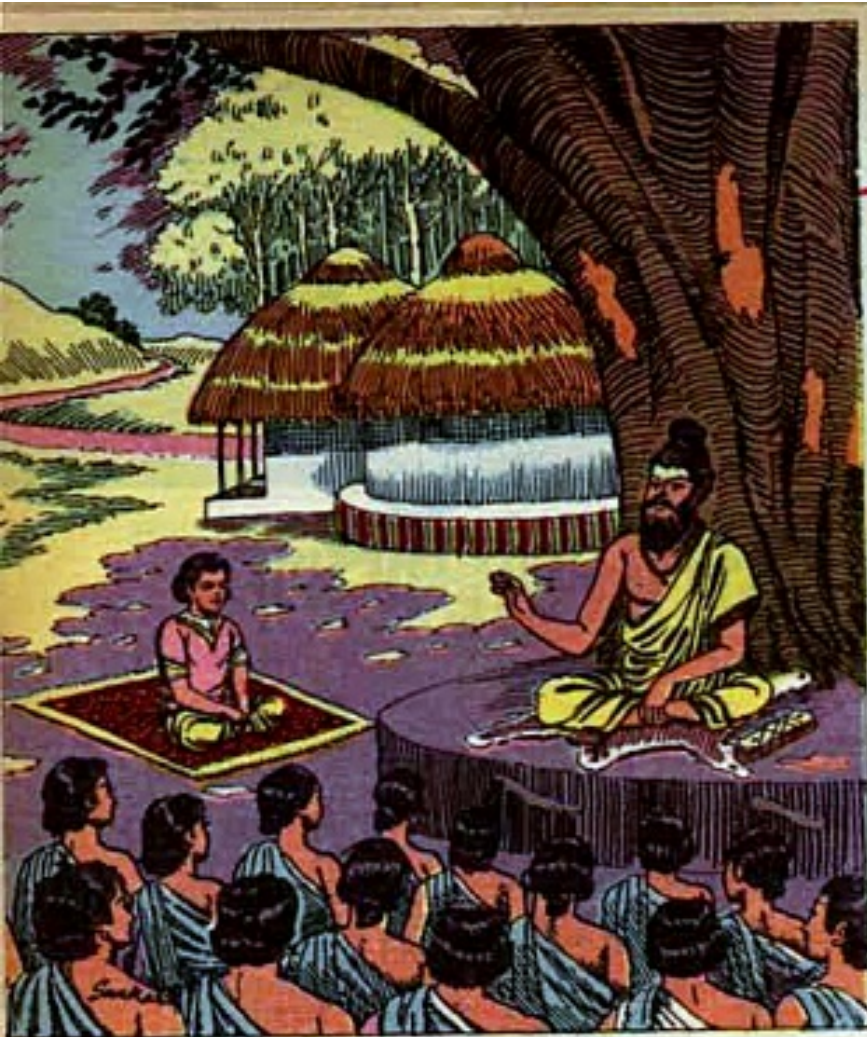
था प्रवीण । विवाह के अनेक वर्ष बाद घर में लड़का पैदा हुआ था, इसलिये पद्मपाद अपने पुत्र को अधिक लाड़-प्यार से पालने लगा । प्रवीण के लिए तरह तरह के कपडे पोषाख बनते । उसके लिए भिन्न भिन्न स्वादिष्ट मेवे मिठाइयाँ बनतीं । उसकी हर इच्छा की पूर्ति के लिए दास-दासियाँ सदैव तैयार रहतीं ।

प्रवीण जब पाँच साल का हुआ, तब उसका अक्षराभ्यास कराया गया । इस के बाद राजा ने उसे सिद्धमुनि के गुरुकुल में भर्ती कराया । प्रवीण राजकुमार था, इस कारण सिद्धमुनि उसके प्रति विशेष आदर का भाव रखते थे । गुरुकुल के बाकी छात्रों को साधारण चावल और कंदमूल का आहार दिया जाता था, मगर राजकुमार को बढ़िया मिष्टान्न-भोजन परोसा जाता था । पढ़ाई के समय अन्य लड़के चटाइयों पे बैठ जाते तो प्रवीण मुलायम गद्दे पर बैठता था । सिद्धमुनि हमेशा इस बात का ख्याल रखते कि प्रवीण एक राजकुमार है । वह कोई साधारण छात्र नहीं है । अत एव उसकी हर बात का विशेष प्रबंध रखने में गुरु नित्य दत्तचित्त रहते ।

जो विद्यार्थी सिद्धमुनि के प्रश्नों का सही जवाब न देते , उनको वे कड़ी सज़ा देते थे; मगर राजकुमार के तहत वे बड़ी नम्रतापूर्वक समझाते, "युवराज, आप को पढ़ाई में ज़रा अधिक ध्यान देना चाहिये । ये ही पढ़ने के दिन हैं । अभी जो सीखोगे, वह सब भविष्य के जीवन में बहुत काम आएगा । इस लिए पढ़ाई को अधिक महत्वपूर्ण समझो ।"

शुरू के कुछ दिनों में प्रवीण को गुरुकुल की शिक्षा और वातावरण कुछ अच्छा सा लगा, परंतु जैसे जैसे वह बारह साल का हुआ वैसे धीरे धीरे यह विशेष बर्ताव वगैरह अच्छी तरह से उसके ध्यान में आ गया । गुरुजी को अपने प्रति विशेष आदर दिखाते देख वह व्याकुल हो उठा । उसने यह भी भली भाँती ताड़ लिया कि इस विशेष बर्ताव के कारण ही वह पढ़ाई में पिछड़ गया था । फिर क्या था, एक दिन मुनि से उसने पूछा, "आचार्यवर, आप मेरे और अन्य लड़कों के बीच यह अन्तर क्यों दिखाते हैं ? बुरा मंत मानिये । आप का मेरे प्रति प्रेम है, उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ । पर एक गुरु के लिए

सभी शिष्य एक-से होने चाहिए । आप प्रेमवश मेरे प्रति नरम व्यवहार करते हैं; शायद इसी कारण मैं पढ़ाई में पिछड़ता हूँ ।"

मेरा आप से नम्र निवेदन है कि आप मुझे कृपया राजकुमार न समझें । अपने राजमहल में मैं भले ही राजकुमार हूँ, यहाँ मैं एक विद्यार्थी हूँ । मुझे भी वहीं डाँट-डपट मिलनी चाहिए, जो औरों को मिलती है ।

इस पर सिद्धमुनि ने कहा, "युवराज, तुम्हारे लिये इसी गुरुकुल में ही नहीं, बल्कि अन्य किसी भी गुरुकुल में इसी प्रकार का आदर अवश्य प्राप्त होगा ।"

दूसरे दिन राजकुमार प्रवीण किसी से कहे बगैर सिद्धमुनि के गुरुकुल से निकल पड़ा और समीप के ज्ञानमुनि नामक आचार्य के गुरुकुल में पहुँचा । वहाँ पर गुरु की सेवा करते हुए और कन्दमूल भक्षण करते हुए सामान्य विद्यार्थियों की तरह पढ़ता रहा ।

इस गुरुकुल में वल्लभ नामक एक विद्यार्थी के साथ प्रवीण की गाढ़ी मैत्री स्थापित हुई ।

कुछ दिन बीत गये । इधर गुप्तचर सर्वत्र राजकुमार की खोज कर रहे थे । आखिर उन्हें ज्ञानमुनि के आश्रम में एक साधारण विद्यार्थी की हैसियत से शिक्षा प्राप्त करनेवाला प्रवीण दिखाई दिया । इस पर वे लोग प्रवीण के साथ ज्ञानमुनि को भी राजा के पास ले गये ।

वास्तविक वृत्तान्त जानकर पद्मपाद अत्यन्त क्रोधित हुआ और उसने मुनि से पूछा, "तुम अहंकार के वशीभूत होकर राजकुमार से अपनी चरणसेवा करवा रहे थे ? न्याय शास्त्र इस बात की घोषणा करता है कि, इस प्रकार भावी राजा का अपमान, उस राज्य का अपमान माना जाएगा । इस अपराध में मैं तुम्हें आजीवन कारावास का दण्ड सुना रहा हूँ ।"

ज्ञानमुनि ने राजा को अनेक प्रकार से समझाने की कोशिश की, कि वह निरपराधी है, उसे इस बात का बिलकुल पता ही नहीं था, कि अपने पास पढ़ने आया हुआ यह लड़का राजकुमार है । पर चूँकि राजा पद्मपाद अपने पुत्र के प्रति विशेष प्रेम रखते थे, उन्होंने मुनि की एक न सुनी ।

बारह वर्ष व्यतीत हुए । प्रवीण बाकायदा

सज्ञान हुआ। एक दिन उसने सोचा कि अपने पिता के शासन के बारे में जनता की राय जान लें।

उसने रथसारथियों में से एक को बुलवाकर आदेश दिया, "तुम राजकुमार का वेष धरकर रथ में बैठ जाओ और मैं सारथी का वेष पहनकर रथ हाँकने का काम करूँगा। इस तरह घूमने पर मुझे यह जानने का मौक़ा मिलेगा कि जनता राज्य शासन के बारे में क्या सोचती है।"

सारथी राजकुमार की बात स्वीकार नहीं कर रहा था, तो प्रवीण ने क्रोध में आकर कहा, "देखो, मैं आदेश दे रहा हूँ, मेरी आज्ञा का पालन करो।"

विवश होकर सारथी ने युवराज का वेष धारण किया और प्रवीण सारथी के वेष में रथ हाँकते हुए नगर की सीमा पर पहुँचा। वहाँ पर उसने एक पेड़ के नीचे रथ को खड़ा किया।

प्रवीण ने पास ही एक झोंपड़ी देखी। उस झोंपड़ी में एक ग़रीब औरत रहती थी। उसका बेटा इस वक्त बीमार था और वह औरत अपने बेटे को पानी पिला रही थी।

प्रवीण झोंपड़ी के द्वार पर पहुँचकर उस ग़रीब औरत से बोला, "माई, इस देश के युवराज पास के पेड़ के नीचे रथपर सवार हैं। उन को प्यास लगी है। क्या थोड़ा पानी दे सकती हो?"

यह बात सुनकर वह बीमार बेटा घबराकर माँ से बोला, "माँ, तुम अभी इसी वक्त युवराज को पानी दे आओ। वरना राजा क्रोध में आकर उनके पुत्र को पानी तुरन्त न देने के कारण तुम्हें भी ऐसा कठोर दण्ड देंगे, जैसा उन्होंने निरपराध ज्ञानमुनि

को दिया है। मैं तो बीमार हूँ, तुम से भी वंचित हो जाऊँगा तो मुझे बेनौत की मौत मरनी पड़ेगी ।"

ये बातें सुनकर सारथी-वेष धारी प्रवीण अत्यन्त व्याकुल हो उठा। विकल-चित्त होकर वह रथपर सवार हुआ, थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर एक मोड़ था। वहाँ रथ के दोनों पहिये निकल आये और रथ उलट कर गिर गया। उस दुर्घटना में सारथी के साथ प्रवीण भी काफ़ी ज़ख्मी हुआ ।

इस घटना का समाचार सुनकर राजा पद्मपाद नाराज़ हो गये और सारथी को दोषी ठहराकर राजा ने कहा, "अरे, तुम ने युवराज की जगह बैठकर युवराज के द्वारा रथ हँकवाया और राजपरिवार का अपमान किया। इस अपराध में तुम्हें दस साल तक कारावास का दण्ड दे रहा हूँ।"

राजकुमार ने राजा से एकान्त में मिलकर निवेदन किया कि उसी के अनुरोध पर सारथी ने वेष बदल लिया था, इसलिये उसकी सज़ा रद्द की जाए ।

राजा पद्मपाद ने युवराज की बात नहीं मानी और कहा, "तुम जैसे भोले युवक की बात मानकर वह सारथी तुम्हारी जगह बैठ गया। यदि कहीं भारी दुर्घटना हो जाती और मैं तुम से वंचित हो जाता तो ? क्या मैं तुम्हारे बिना जीवित रह सकता ?"

इस घटना के थोड़े दिन बाद एक दिन रात में पहरेदारों की आँखों में धूल झोंककर एक व्यक्ति ने अंतःपुर में प्रवेश किया। वह सीधे युवराज के शयन-कक्ष में प्रवेश कर उसकी छाती में छुरी

झोंकने को उद्युक्त हुआ ।

पर उस समय युवराज प्रवीण जाग रहा था, इसलिये उसका हाथ मरोड़कर उसने छुरी खींच ली । इसके बाद गहरी दृष्टि से उस को परखकर युवराज विस्मय में आ गया और उस से पूछा, "ओह, वल्लभ हो तुम !"

इसपर उस युवक ने कहा, "हाँ, हाँ, युवराज; मैं ही हूँ वल्लभ । तुम्हारी वजह से गुरुदेव के प्रति तीव्र अन्याय हो गया है । मैं ने उस वक्त सोचा था कि तुम बालक हो और इस में तुम्हारा कोई दोष नहीं है । लेकिन अब तुम काफ़ी बड़े होकर भी गुरुजी को कारागार से मुक्त न करवा कर मौन रह गये हो । इस लिए अब मैं ने ही निश्चय कर लिया कि तुम्हारे प्रति अमिट प्रेम के कारण तुम्हारे लिये बड़े से बड़े अत्याचार व अन्याय करनेपर तुले हुए तुम्हारे पिता को सबक़ सिखाना चाहिए । इसीलिये मैं ने छाया की भाँती तुम्हारा पीछा करते, तुम्हारे रथ के पहियों के कीलों को निकाल कर तुम्हें दुर्घटना का शिकार बनाया ।"

प्रवीण इसपर कुछ उत्तर देने वाला था तभी पहरेदार वहाँ पहुँचे और वल्लभ को बन्दी बनाकर ले गये । राजा ने उसी समय सुनवाई करके वल्लभ को फाँसी की सज़ा सुनाई और सबेरा होते ही उस सज़ा को अमल करने का आदेश दिया ।

मगर उसी रात को प्रवीण ने एक आश्चर्यजनक निर्णय किया । उसने सारी सेना को अपने अधिकार में कर राजा को बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया और खुद को 'राजा' घोषित किया ।

इस के बाद प्रवीण ने वल्लभ की फाँसी की सज़ा रद्द कर दी; ज्ञानमुनि व सारथी को कारागार से मुक्त किया और बाद में उन से कहा, "मेरे कारण आप तीनों बिना अपराध दण्ड के भोगी बने । इस कारण मैं आप लोगों का क्षमाप्रार्थी हूँ । आज से आप तीनों शासन के कार्यों में मेरी सहायता करते हुए, अपनी भूलों को सुधारने में मेरा हाथ बँटाइये ।"

लेकिन ज्ञानमुनि और सारथी ने प्रवीण के अनुरोध को अस्वीकार किया और वे वहाँ से चले गये ।

अब प्रवीण ने वल्लभ से कहा, "दोस्त, तुम तो मेरे अंतरंग सलाहकार बने रहो । यही मेरी तुम से प्रार्थना है ।"

वल्लभ ने तत्काल अपनी स्वीकृति दे दी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा, "राजन्, प्रवीण ने अपने पिता को क्यों कारागार में बन्दी बनाया जो उसे अपने प्राणों से अधिक प्यार करते थे। साथ ही उसकी दो बार हत्या करने का प्रयत्न करनेवाले, वल्लभ को फाँसी की सज़ा न देकर उस को क्यों अपना अंतरंग सलाहकार नियुक्त किया ? ज्ञानमुनि और सारथी ने प्रवीण की मदद करने से क्यों अस्वीकार किया ? इस संदेहों का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सिर फटकर उसके शतशः टुकड़े हो जाएँगे।"

इसपर विक्रमार्क ने कहा, "प्रवीण ने छद्मवेष में रहकर एक गरीब बीमार बेटे की बातें सुनीं तभी उसने भाँप लिया कि उसका पिता हद से अधिक पुत्र-वात्सल्य के वशीभूत होकर जनता की निन्दा का कारण बन रहे हैं। इसके बाद सारथी के बारे में भी कुछ ऐसा ही हुआ। उसके अपने को निर्दोष बताने पर भी उसकी बातों पर ध्यान दिये बिना राजा ने उसे कारावास का दण्ड सुनाया। इस स्थिति में उसकी हत्या करने के लिये आये हुए गुरुकुल के सहपाठी वल्लभ ने ज्ञानमुनि के कारावास का समाचार सुनाकर प्रवीण के मन में ज्ञानोदय कराया। इन घटनाओं के आधारपर प्रवीण इस निर्णय पर पहुँचा कि, उस के पिता जब तक राजपद संभालते रहेंगे तब तक किसी न किसी के प्रति अन्याय होता ही रहेगा। इसी विचार से प्रेरित होकर प्रवीण ने अपने को 'राजा' घोषित किया और अपने पिता को राजमहल में बन्दी बनाया। ज्ञानमुनि तथा सारथी ने प्रवीण के दरबार में किसी पद पर रहने से इसलिये अस्वीकार किया कि, उन्होंने अच्छी तरह से यह बात जान ली थी कि राजाओं की सेवा कभी ख़तरे से खाली नहीं होती। किन्तु वल्लभ ने प्रवीण के भीतर पैदा हुए परिवर्तन को भली भाँति पहचान लिया और उसके अनुरोध को इनकार न कर पाया। उसने राजा के 'अंतरंग सलाहकार' के पद को स्वीकार किया।

इस प्रकार उत्तर देकर राजा के पुनः मौन होते ही बेताल फिर अदृश्य हो शवके साथ पेड़पर जा लटका (कल्पित)

आत्माहुति

धर्मगिरी के राजा के ख़ज़ाने में एक बार एक हज़ार स्वर्ण-मुद्राओं की चोरी हो गई। चोर को पकड़ने की ज़िम्मेदारी राजा ने युक्तिवर्मा को सौंप दी। साथ साथ राजा ने इस काम के लिए एक शर्त भी रखी—दूसरे दिन सूर्यास्त के पहले युक्तिवर्मा चोर को न पकड़ पाए, तो उसे बिना संकोच के आत्माहुति करनी होगी।

युक्तिवर्मा ने राजा की शर्त को मंजूर करते हुए कहा—"महाराज, यदि मैं चोर को न पकड़ सका, तो मेरी आत्माहुति के बाद उसको एक मंत्री का पद देना होगा। क्यों कि चोरी करने के बाद मुझ जैसे व्यक्ति के हाथ जो बन्दी न बना, तो निश्चय ही वह महान् बुद्धिशाली होगा।"

दूसरे दिन जब सूर्यास्त होने में कुछ ही समय बाक़ी था, दरबार में बैठे राजा से युक्तिवर्मा ने नम्र निवेदन किया—"महाराज, मैं चोर को बन्दी नहीं बना पाया। अतः मैं आत्माहुति करने जा रहा हूँ। जैसा कि मैं ने आप से अनुरोध किया था, आप चोर को मंत्री बना दीजिए, ताकि मेरी आत्मा को शांति मिले।"

यह सुनकर कोषाधिकारी हौसले के साथ उठ खड़ा हुआ और उस ने राजा को प्रार्थना की—"महाराज, तब तो आप मुझे ही मंत्री का पद दीजिएगा!"

अब क्या था, राजा ने भटों को आदेश देकर कोषाधिकारी को बन्दी बना दिया। युक्तिवर्मा की भूरी भूरी प्रशंसा कर उस का सम्मान किया। मंत्री युक्तिवर्मा ने राजा की खूब सहायता की।
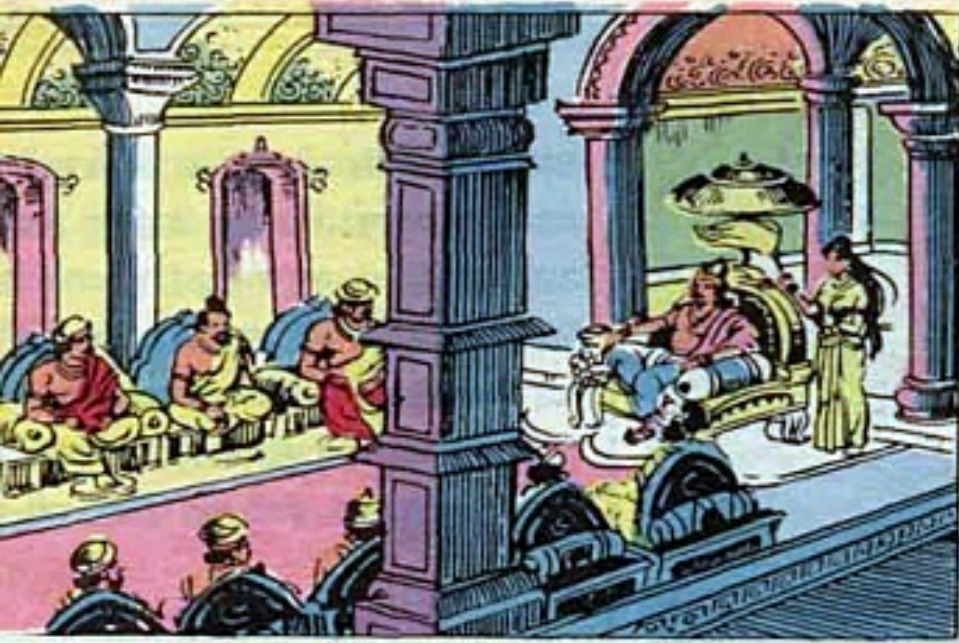
काव्य कथाएँ :

राक्षस-मुद्रिका १

शताब्दियों पहले मगध देश पर सर्वार्थसिद्धि नाम का एक राजा राज्य करता था। उसकी राजधानी थी पाटलीपुत्र । उस के दरबार में एक मंत्री था—राक्षस, जो सर्वथा सुयोग्य और समर्थ था । राक्षस की उचित सलाहों के कारण सर्वार्थसिद्धि के शासन में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं थी ।

राजा के दो पत्नियाँ थीं । एक पत्नि क्षत्रिय परिवार की थी, जिस के पुत्र नन्द कहलाते थे । दूसरी पत्नी थी मुरा, जो एक शूद्र नारी थी। उस के पुत्र का नाम था मौर्य। मौर्य विशेष प्रतिभाशाली था, इस लिए राजा ने उसे अपना सेनापति बनाया था ।
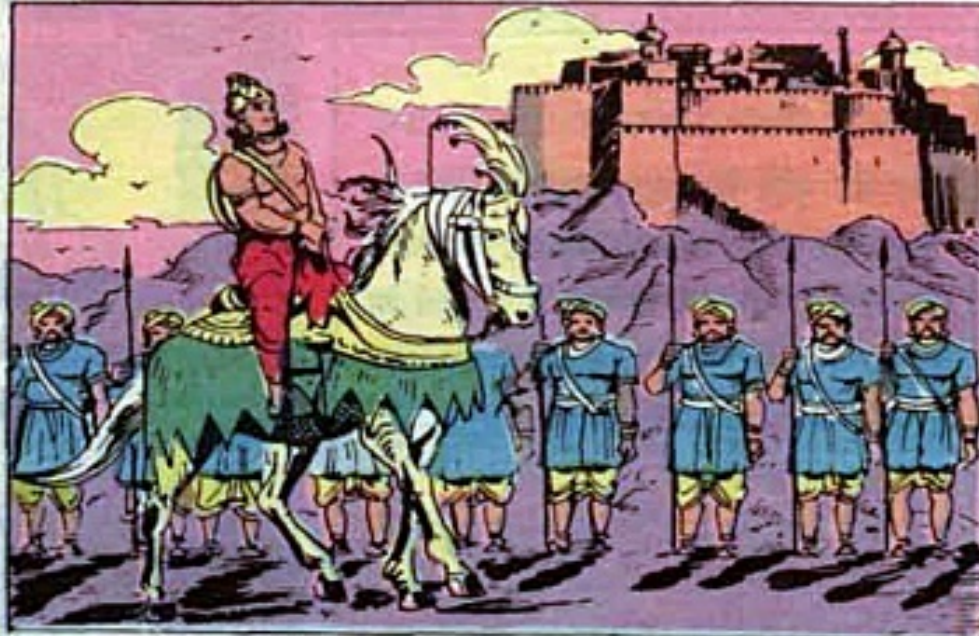
मौर्य का पुत्र चंद्रगुप्त बचपन से ही अपनी बुद्धिमता और साहस-पराक्रम में बहुत मशहूर था । घुड़सवारी, शस्त्र-विद्या आदि क्षत्रियोचित विद्याओं में वह नन्दों की अपेक्षा अधिक कुशल था । सब लोग उस की भूरि भूरि प्रशंसा करते थे ।

राजा सर्वार्थसिद्धि की मृत्यु का समय समीप
आया। राजा को सिंहासन के लिए अपने
उत्तराधिकारी को चुनना था। इस पद के
लिए राजा ने बड़े बेटे नन्द की अपेक्षा छोटे
बेटे मौर्य को अधिक योग्य समझा और उसे
वारिस बनाया। इस कारण नन्दों के हृदय में
मौर्य के प्रति बड़ी ईर्ष्या पैदा होकर रही।

राजा की मृत्यु के पश्चात् नन्दों ने मौर्य के परिवार को समूल उखाड़ने का षड्‌यंत्र रचा। एक दिन आधी रात बीते नन्दों ने मौर्य के घर को घेर लिया और मौर्य को उसकी पत्नी व बच्चों के साथ बन्दी बनाकर पाताल-गृह में रख दिया।

पाताल-गृह की दीवार में एक छोटा छेद
था। नन्दों का एक सेवक मौर्य-परिवार के
सभी सदस्यों के लिए केवल एक आदमी
का पेट भरे इतना खाना और पानी छेद में से
दिया करता।

एक आदमी का खाना सभी लोग बाँट कर खाएँ तो किसी का भी पेट न भरे और सब बारी-बारी मौत के शिकार बन जाएँ। इस लिए सब ने आपस में मश्विरा करके निर्णय किया-खाना एक व्यक्ति खाकर प्राण बचाए और नन्दों से प्रतिशोध ले। इस निर्णय के अनुसार हर रोज़ केवल चंद्रगुप्त खाना खाता रहा।

नन्दों में से ज्येष्ठ व्यक्ति मगध राज्य की राजगद्दी पर बैठा। कुछ दिन बीत गये। इस बीच एक दिन वंग देश से एक राजदूत आ पहुँचा। वह अपने साथ अपने राजा के आदेश पर एक समस्या ले आया था। उस ने सभा के सामने वह समस्या रखी और उसका हल बताने का सब से अनुरोध किया, मगर कोई भी उस का हल नहीं बता पाया।

नन्द के मंत्रियों में से एक मंत्री ने राजा को सलाह दी—"महाराज, इस प्रकार की समस्याओं की पूर्ति करने व हल निकालने में प्रवीण एक व्यक्ति है चन्दगुप्त, जो हमारे कारागार में बन्दी है। उस को दरबार में बुलाने पर हमारी इज़्ज़त बच सकती है।' राजा को यह सलाह पसंद आई।

बस, अब क्या था ! कारागार के द्वार खुल गये । एकमात्र चन्दगुप्त जीवित मिला । ठीक एक साल बाद चन्दगुप्त बाहरी दुनिया देख पाया । उस को नहला-दुहला कर भोजन खिलाया गया, राजोचित वस्त्र पहनाये गये । उस के सामने वह जटिल समस्या पेश की गई ।

चन्दगुप्त ने राजसभा में प्रवेश किया और वंग देश के राजदूत के द्वारा पेश की गई समस्या का हल खेल-खेल में बता दिया । इस पर सभी दरबारी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने चन्दगुप्त की प्रतिभा की बहुत तारीफ़ की ।

राजसभा के सदस्यों ने विशेष उत्साह में आकर चन्दगुप्त को एक हाथी पर बैठाया और जुलूस के साथ उसे अपने घर पहुँचा दिया । इस प्रकार यकायक चन्द्रगुप्त जनता में अत्यन्त प्रिय बना । अतः नन्द पुनः उसे कारागार में बन्दी न बना सके ।

(क्रमशः)

युवा पिशाच की इच्छा

गंगासागर नामक गाँव की उत्तरी दिशा में इमली का एक बाग था। इस बाग को पार करने पर एक ऊँचा टीला था, जिसपर दुर्गादेवी का एक प्राचीन मन्दिर था। इमली के बाग में एक युवा पिशाच आकर रहने लगी। गाँव के लोगों को इमली के बाग को पार कर, टीले पर चढ़कर देवी के दर्शन करते देख युवा पिशाच को आश्चर्य के साथ दुख भी होने लगा।

दिन के वक्त में भी इमली का बाग छाया से भरा रहता है, इस बाग में ऊँचे पेड़ पर मुझे निवास करते देखकर भी ये लोग टीलेपर चढ़ने की मुसीबत क्यों उठाते हैं ? क्या उन्हें कोई मुसीबत हों तो मैं उसे दूर नहीं कर सकती ?—युवा पिशाच ने अपने मन में सोचा।

उस गाँव से एक धनवान आदमी, एक मध्यवित्त परिवार का व्यक्ति और एक गरीब औरत हर रोज़ नियमित रूप से देवी के दर्शन करने जाते थे।

एक दिन धनवान आदमी देवी के दर्शन करके सूर्यास्त के समय अपने गाँव की ओर लौट पड़ा। ज्यों ही वह इमली के बाग में पहुँचा, यह युवा पिशाच झट पेड़पर से उसके सामने कूद पड़ी और बोली, "बेचारे आप प्रतिदिन बड़ी मुसीबत उठाकर इतनी दूर चले आते हैं; क्या उस देवी ने तुम्हारी कुछ यातनाएँ दूर की हैं ? मैं चुटकी बजाने की देर में तुम्हारी सारी मुसीबतें दूर कर सकती हूँ।"

धनवान पहले तो पिशाच को देखकर डर ही गया, मगर फिर साहस बटोरकर बोला, "मैं अपनी मुसीबतों के बारे में क्या कहूँ ? मेरे पास धन, ज़मीन-जायदाद की कोई कमी नहीं है। पर क्या बताऊँ; मैं पलभर भी सो नहीं पाता हूँ।"

युवा पिशाच ने धनवान की मुसीबत का असली कारण जान लिया, और कहा, "सुनो,

वर्षा प्रभु

आज रात से ही तुम्हारे सारे कष्ट दूर हो जायेंगे। पर इसके ऐवज में मेरे लिये दुर्गा-मन्दिर जैसा एक मंदिर इस इमली के बगीचे में बनाना होगा ।"

"अरे यह कौन बड़ी बात है ? मेरे कष्ट दूर हो जायेंगे तो मैं पलभर में तुम्हारे लिये मन्दिर बना सकता हूँ।" यह कहकर धनवान आदमी वहाँ से चला गया ।

थोड़ी देर बाद मध्यवित्त परिवार का आदमी बगीचे में आ पहुँचा ।

युवा पिशाच उसके सामने जाकर बोली, "अरे तुम डरो मत। तुम हररोज़ नियमित रूप से मन्दिर जाते हो, फिर भी ऐसा लगता है कि, उस देवी ने तुम्हारी कामना पूरी नहीं की है: ठीक है न मेरा कहना ?"

"किस्मत साथ दें तब न हर इच्छा पूरी होती है ?" मध्यवित्त परिवार का वह आदमी बोला ।

"तुम अनावश्यक बकवास बन्द करो । मैं क्षणभर में भाँप सकती हूँ, कि तुम जैसे व्यक्ति की कामना क्या हो सकती है । अब समझ लो—तुम्हारी इच्छा की पूर्ती हो गयी है। लेकिन बदले में तुम्हें एक काम करना होगा । एक धनवान ने मेरे लिये इस बाग में मन्दिर बनाने का वचन दिया है, अब तुम्हारा काम यह होगा कि हररोज़ तुम उस मन्दिर में दिया जलाओ।" युवा पिशाच ने अपनी शर्त बतायी ।

"मेरी इच्छा की पूर्ति हो जाए, बस, मन्दिर में ही क्यों, अपने घर में भी तुम्हारे लिये दीप जलाया करूँगा। मेरे पच्चीस साल उमर की एक लड़की है । दहेज़ देने की हैसियत न रखने के कारण मैं उसकी शादी नहीं कर पा रहा हूँ ।" गृहस्थ ने जवाब दिया ।

"तुम्हें इतना सब सुनाने की ज़रूरत नहीं है। तुम्हारा कष्ट अब दूर हो गया है, अब घर लौटकर जाँच लो ।"—युवा पिशाच ने कहा ।

उस गृहस्थ के चले जाने के थोड़ी देर बाद ग़रीब औरत उधर से गरजने लगी। पिशाच ने उसका भी परामर्श करके कहा, "मैं तुम्हारी तकलीफ़ दूर किये देती हूँ। बस, तुम्हें एक काम करना होगा । इस बाग में जो मन्दिर बनाया जाएगा, वहाँ पर तुम्हें अपने गाँववालों को बुलाकर मेरे लिये मेला व उत्सव मनाना होगा ।"

इसपर ग़रीब औरत बोली, "मेरी मुसीबत दूर हो जाएगी तो मैं भी खुद उस मेले में नाचूँगी और गाऊँगी । मेरा पति पियक्कड है, वह सारा पैसा मुझे मार-पीटकर वह हडप जाता है ।"

"अब इसके आगे तुम्हें कोई तकलीफ़ नहीं रहेगी, घर लौट जाओ ।" पिशाच ने समझाया ।

इसके बाद युवा पिशाच ने ये सपने देखे कि, उसके लिये बगीचे में मन्दिर बन गया है और सुदूर प्रदेशों से लोग हररोज़ उसकी पूजा-अर्चा कर रहे हैं ।

दूसरे दिन संध्यासमय धनवान को बाग में प्रवेश करते देख पिशाच ने पूछा, "पिछली रात तो तुम खूब सो सके न ? अब मेरे मन्दिर की नींव कब डालनेवाले हो ?"

धनवान झल्लाकर बोला, "सब से पहले मैं तुम्हें दफ़नाने का मुहूर्त देखनेवाला हूँ । रातों में मेरी नींद हराम होने का कारण मेरा धन ही है, यह मानकर तुम ने उसे कोयलों में बदल दिया है ? अब देखो मेरी संपत्ति पहले जैसी कर दो, नहीं तो ओझा को बुलवाकर मैं तुम्हें दफ़नवा दूँगा ।"

दफ़नाने की बात सुनकर पिशाच काँप उठी और बोली, "देखो भाई, ऐसा न करो । तुम घर लौटकर देखो, तुम्हारा धन सारा का सारा पहले जैसा तुम्हें प्राप्त होगा । जाओ ।"

इसके बाद उधर से निकले मध्यवित्त परिवार के आदमी को देख पिशाच ने उससे पूछा, "तुम्हारी मुसीबत दूर हो गयी है न ? दीप जलाते वक्त तुमने मेरा स्मरण किया होगा न ?"

"तुम्हारे लिये होम करना चाहता हूँ । मैंने अपनी बेटी का विवाह करने की अपनी असमर्थता प्रकट की, तो तुमने उसे युवक के रूप में बदल दिया ? होंठों पर मूछें आयी देख वह शर्म से दबी जा रही है । तुम उसको फिर से यथा पूर्व बदल देती हो या ..... ।" आवेश में आकर गृहस्थ ने कहा ।

होम की बात सुनकर पिशाच घबरा उठी और हाथ जोड़कर कहने लगी, "तुम मेरे लिये होम मत कराओ, घर लौटकर देख तो लो । सारी हालत पहले जैसी ही पाओगे ।"

इसके थोड़ी देर बाद गरीब औरत ज़ोर से चिल्लाती हुई पिशाच के समीप पहुँची । उसको देख पिशाच ने पूछा, "ओह, तुम्हें मेले में

नाचना-गाना होगा न । क्या अभी से अभ्यास शुरू किया तुमने ?"

यह प्रश्न सुनकर उत्तेजित होकर दाँत पीसते हुए ग़रीब औरत बोली, "मेला, उत्सव कैसा ? अभी तुम्हें गढ़े में गाड़ देती हूँ । ओझा को बुलाकर पेड़ के तने में कील गड़वा देती हूँ जिससे तुम कभी पेड़ से उतर ही न सको । मैं ने कहा था, मेरा पति शराब पीकर मुझे मारपीटकर मेरा पैसा हड़प लेता है; तो तूने उसके बदले में उसको लकवे का शिकार बना दिया ?"

कील गड़वाने की बात सुनकर युवा पिशाच थरथर काँपने लगी । मिन्नत के स्वर में वह उस औरत से कहने लगी, "माई, ऐसा दण्ड मत दो । घर लौटकर देख लो । तुम्हारा पति पूर्ववत् गुनगुनाता हुआ दिखाई देगा तुम्हें ।"

फिर क्या था ? गरीब औरत पिशाच को गालियाँ देते हुए वहाँ से चली गयी । युवा पिशाच को लगा, अब अधिक समय के लिये वहाँ पर रहना ख़तरे से खाली नहीं है । धनवान, मध्यवित्त परिवारवाला और ग़रीब औरत अवश्य उसकी हानि कर सकते हैं ।

यह विचार आते ही युवा पिशाच वहाँ से उड़ गयी और जंगल में एक जटावले बरगद पर बैठ गयी । क्रोध से वह चिल्ला उठी, "ये लोग दुष्ट हैं । उन की भलाई की बात सोचना मेरी ही भूल थी ।"

उस वृक्ष पर अपना कायम निवास बनायी हुई एक वृद्ध पिशाच, युवा पिशाच की यह चिल्लाहट सुनकर चौंक पड़ी । आँखें खोलकर उसने युवा पिशाच की ओर देखा और उससे उसका वृत्तान्त सुना । बाद में उसने इसे समझाया, "सुनो, सारी गलती तो तुम्हारी ही है । मनुष्य देवताओं की शक्ति की पूजा करते हैं, पिशाचों की जादू की शक्ति की नहीं । मन्दिर देवताओं के लिये बनाये जाते हैं, हम जैसे पिशाचों के लिये नहीं । तुम अब इस अनुभव के आधारपर अपना स्वभाव बदल डालो और गाँवों की तरफ़ न जाकर चुपचाप इसी पेड़ पर अपना समय बिता दो ।"

श्रीकृष्ण अब युवा हुए। उनके सौन्दर्य, बल और पराक्रम की ओर गोकुल की सभी नारियाँ आकृष्ट थीं। एक दिन अर्धरात्रि के समय अपने गिर्द गोपियों को वृत्ताकार में खड़ी करके श्रीकृष्ण बीचोबीच रहकर उन के साथ खेल विनोद में निमग्न थे। उसी समय अचानक अरिष्ट नामक एक राक्षस एक भयंकर साँड के रूप में वहाँ उपस्थित हुआ और ज़ोर से रँभाते हुए कृष्ण की ओर सींग बढ़ाये दौड़ पड़ा।

साँड़ की वह भयंकर आकृति और उसकी रँभाने की भयानक आवाज़ सुनकर सभी गोपिकाएँ भयभीत हो कृष्ण की ओट में पहुँची और उन्हों ने अपनी आँखें मूँद लीं।

कृष्ण ने पहले सभी गोपियों को ढाढ़स बंधवाया। बाद में हमला करने आये साँड़ के दोनों सींग उसने कसकर पकड़ लिये और उसको निश्चल बनाया। अब अपनी पूरी ताकत लगाकर उसने साँड़ की गर्दन मरोड़कर उसे बाजू में ढकेल दिया।

अपने मुँह और नाक से खून उगलते वह भयंकर बैल निर्जीव होकर गिर पड़ा।

अब गोपिकाओं की हिम्मत बँध गयी और कृष्ण को घेरकर उन्होंने उसकी भूरी-भूरी प्रशंसा की। हे कृष्ण, आज तुम्हारी वजह से हम सुरक्षित हैं। वरना वह साँड़ न जाने हमारी क्या दुर्गति करता। तुमने उसका शूरता के साथ सामना किया और उस के दाँत खट्टे किये। तुम्हारा पराक्रम, बस देखते ही बना! हम बहुत घबड़ा गयीं थीं। समझ में नहीं आता था, क्या करें? तुम्हीं हमारे त्राता बनकर ठीक समय हाज़िर हुए।

९. कृष्ण का आमंत्रण
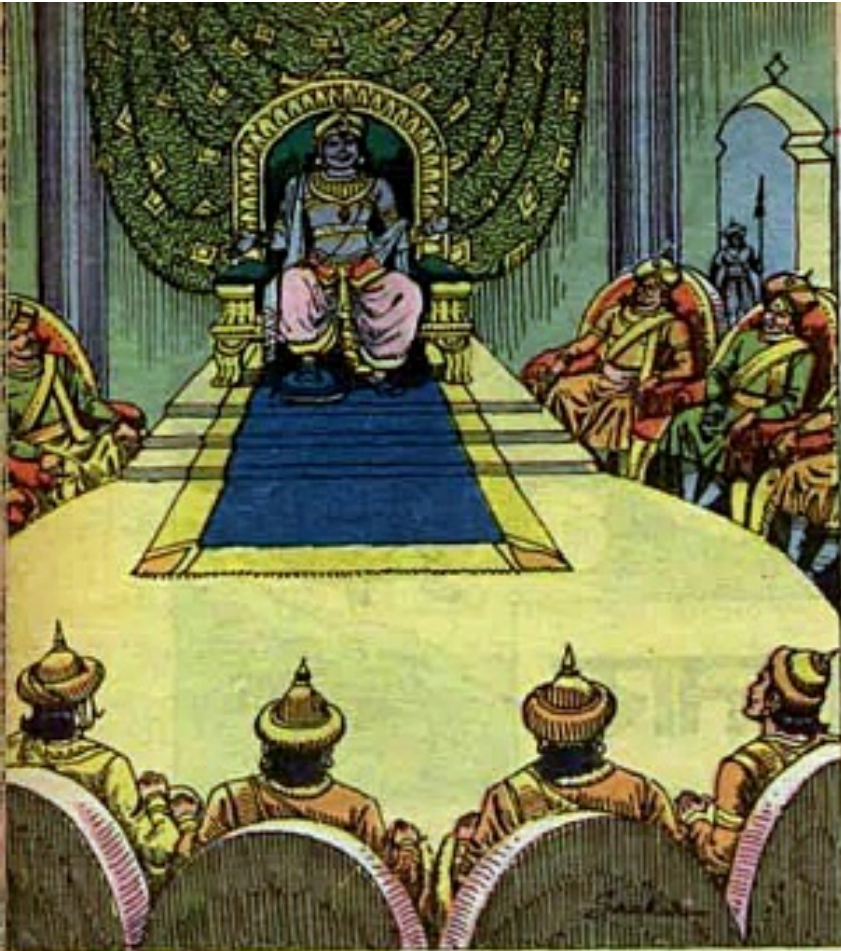
इस प्रकार इधर वृन्दावन में श्रीकृष्ण केलि-क्रीडा में निमग्न थे, मगर उधर मथुरा में कंस के बुरे हाल थे, वह चिन्ता में डूबा हुआ था। कृष्ण के बारे में सुनकर उसका मन विकल हो गया। क्रमशः वह जीवित शव की भाँति बन गया। एक दिन उसने अपने सभाभवन में उग्रसेन, वसुदेव, सत्यक, अंधक, कंपक, दारुक, विपृथ, बभ्रुव तथा अन्य यदु एवं भाजवंशी प्रमुख व्यक्तियों को बुलवाकर उनसे कहा—

"आप सब मेधावी हैं, ज्ञानी हैं। किसी प्रकार की जटिल समस्या का हल ढूँढ़ सकते हैं। आप सब मेरे परम हितैषी हैं। फिर भी इस समय मुझे एक भारी ख़तरे में फँसे देखकर भी जाने क्यों आप मेरी उपेक्षा सी कर रहे हैं। नंदगोप का पुत्र कृष्ण मेरा निर्मूलन करने पर तुला हुआ है। उपेक्षित रोग की भाँति, वायु का संयोग प्राप्त मेघखण्ड की तरह, तथा विषवृक्ष के जैसे दिन ब दिन उसका विकास हो रहा है। बहुत सोचकर, सिर खपाने पर भी मेरी समझ में नहीं आ रहा है, कि वह किस अंश को लेकर पैदा हुआ है। लगता है उस में कोई देवांश है। क्योंकि उसका सारा चरित्र ही मानवातीत प्रतीत होता है। सुन लीजिये, मैं उसकी सारी कहानी सुनाता हूँ।"

इसके बाद कंस ने उन लोगों को कृष्ण के सभी कार्योंका सविस्तार विवरण सुनाया। उसने कैसे शैशव दशा में ही पूतना का वध किया, पेट के बल रेंगने की उमर होने से पहले ही उसने शकट को कैसे लात मारकर चकनाचूर कर दिया; लड़खड़ाते कदमों से चलने की अवस्था में जुड़वे साल वृक्षों में से पत्थर की ओखली खींचकर वृक्षों को कैसे गिरा दिया—वगैरह करतूतें कहते कहते कंस बोल उठा, "कहाँ तक उस के करिश्मे गिना दूँ ? समय बीतते-बीतते उसने कालिया का मर्दन किया; प्रलंब, धेनुक आदि का संहार किया। अभी अभी कुछ दिन पहले उसने अरिष्ट का वध किया। बच्चों की बात भगवान जानें, पर क्या युवक भी ऐसे कार्य संपन्न कर सकते हैं ? सात दिन तक मूसलाधार वर्षा हुई, तब एक पहाड़ को ही बड़ी आसानी से उठाकर छत्र की भाँति पकड़े रहा वह ! यह उसका एक असाधारण कार्य ही उसकी विराट शक्ति का परिचय देने के लिये पर्याप्त है। अन्य कार्यों का

उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है ।''

यह सारा वृत्तान्त सुनकर कंस ने उन लोगों से कह कर और आगे कहा—

''अब राक्षस वीरों में केवल केशि ही बचा है हमारे पास । अगर वह भी कृष्ण के हाथों मर जाए तो फिर मेरी ही बारी आएगी । जो दूसरों को मारने का ही शौक रखता है, वह भला क्या मुझे छोड़ देगा ? कृष्ण के साथ बल-पराक्रम में लगभग उसी का सानी बलराम भी है । दरअसल नारद ने मुझे सच्ची बात बता दी है । देवकी ने उस दिन अर्ध-रात्रि के समय एक पुत्र को जन्म दिया था और इसी वसुदेव ने उस शिशु को ले जाकर नन्द गोप की पत्नी की बगल में रखा, और उसके गर्भ से उत्पन्न लड़की को उठाकर ले आया। उसे अपनी पत्नी के पास लिटा दिया था । वह लड़की भी मेरे हाथों से बचकर आसमान में उड़ गयी और 'विन्ध्य वासिनी' देवी बनकर बैठ गयी है। आज तक मेरे अत्यन्त हितैषी जैसा अभिनय करते हुए इस वसुदेव ने मेरे साथ कपट किया है। मैंने उसका जितना आदर किया, उससे कहीं अधिक मात्रा में मेरे साथ द्रोह किया है ।''

इसके बाद वसुदेव की ओर मुड़कर कंस बोलने लगा, ''मैं तुम्हारे मन की बात जानता हूँ।तुम अपने पुत्र के हाथों मेरा वध कराकर उसे मथुरा का राजा बनाना चाहते हो । लेकिन तुम यह बात नहीं जानते—साक्षात् इन्द्र भी पृथ्वीपर उतर आये तो वे मेरा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते । यहीं पर तुम भ्रम में फँसे हो । तुम चक्रवर्ती वंश में पैदा हुए हो, बचपन से ही मेरे पिता की छत्रछाया में पले हो । मेरी बहन के साथ विवाह करके तुम समस्त यादवों के गुरुस्थान पर पहुँच गये हो । इतने लायक होते हुए भी तुम इतना नीच कर्म करने पर तुल गये हो । तुम्हारा पाप तुम्हारे साथ सदा लगा रहे, मैं तुम्हारा वध नहीं करूँगा । मैं ने आजतक बन्धु, मित्र और ब्राह्मणों की हत्या नहीं की है, भविष्य में भी नहीं करूँगा । तुम्हारे अपराध के कारण मैं तुमको मार भगा सकता हूँ, पर यह भी मैं करना नहीं चाहता । तुम खुद यहाँ से जाना चाहते हो, तो जा सकते हो । रहना चाहो, रह सकते हो ।''

इसके बाद भोजवंशी अक्रूर को उद्देश्य कर
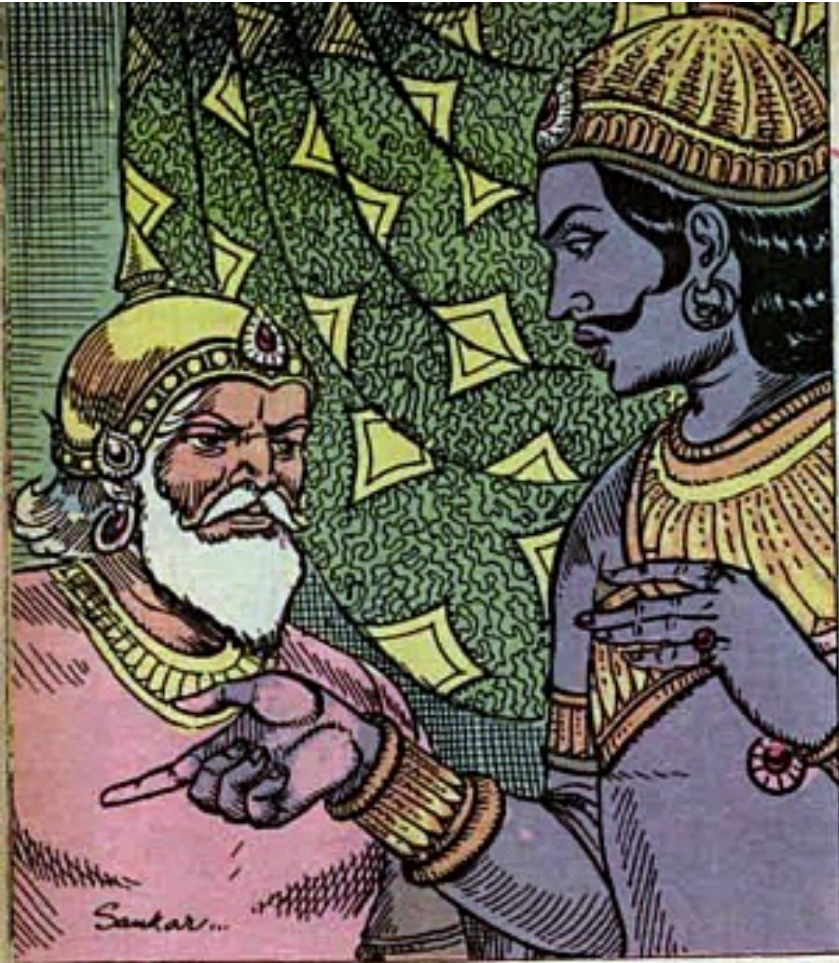
वह बोला, "मैं इस वर्ष अपने धनुष का एक महान् उत्सव मनाने जा रहा हूँ। उस में भाग लेने सुदूर देशों के राजा-महाराजा यहाँ पधारनेवाले हैं। अनेक दिनों तक उन्हें दावतें देनी पड़ेंगी। गोकुल से पर्याप्त मात्रा में दूध, दही, घी, जंगली शहद आदि मंगवाना पड़ेगा। इसलिये तुम गोकुल में जाकर ऐसा आदेश दे दो, जिससे वक्त पर ये चीज़ें यहाँ पहुँचायी जायँ। लौटते समय नन्दगोप और उस के परिवार को साथ लेते आओ। मेरे भानजे कृषण और बलराम को देखने मेरा जी तरस रहा है। सुना है—वे महान् बलशाली और पराक्रमी हैं। तुम उन से इस प्रकार बातें करो कि वे समझें कि मैं अपने सच्चे दिल से उन को देखने को तरस रहा हूँ। मेरे यहाँ दो ज़बरदस्त पहलवान हैं। इनके साथ उन दोनों की कुश्ती लड़वाकर मैं उनके बल-पराक्रम की परीक्षा करूँगा। उन दोनों को तुम लाने में सफल होगे तो मैं समझूँगा कि तुमने मेरा बहुत बड़ा उपकार किया है। वसुदेव शायद तुम्हारे कान भरने का प्रयत्न करेंगे, मगर तुम उनकी बातों में न आना। तुम अभी, इसी वक्त गोकुल के लिये रवाना हो जाओ।"

कंस के परिवार में अनेक लोग कृष्ण को भगवान का अवतार मानते थे, अक्रूर भी उन्हीं में से एक था। कृष्ण को देख कर तर जाने का मौक़ा अपने को मिल रहा है, यह जानकर वह मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ। फिर कंस से बिदा लेकर उसी समय रथ पर सवार होकर वह गोकुल के लिये चल पड़ा।

सभाभवन में कंस के द्वारा वसुदेव को अपमानजनक बातें सुनाने पर अधिकांश सभासद मन ही मन बहुत दुखी हुए। मगर किसी ने भी कंस के विरुद्ध आवाज़ नहीं उठायी। उन में सब से वयोवृद्ध अंधक नाम का यादव था, उससे चुप रहा नहीं गया। निर्भयतापूर्वक आगे बढ़कर उसने कंस से कहा—

"कंस, तुमने अभी जो बातें कहीं, वे राजोचित नहीं हैं। थोड़ा भी सोचे बग़ैर एक बुजुर्ग व्यक्ति पर इस प्रकार दोषारोपण करना, उसको लांछन लगाना नहीं। ऐसा व्यवहार करके तुम अपने मातापिता और कुल को भी कलंक

लगा चुके हो। वसुदेव ने अपने पुत्र की रक्षा के हेतु उसे छिपाया, तो तुम उसपर दोषारोपण करते हो ? क्या तुम इस सत्य को नहीं जानते, कि अपने वंश की रक्षा के लिये माँ बाप नाना प्रकार की यातनाएँ झेलते हैं ? तुम्हारे माता-पिता ने तुम्हारे लिये कितनी यातनाएँ झेली होंगी, तभी तो तुम इतने बड़े हो गये हो न ? तुम्हारा यह व्यवहार मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगा। तुम जैसे के साथ अपनी मैत्री का संबन्ध न तोड़कर तुम से चिपके रहना हमारी मूर्खता है। हम से कई गुना अक्रूर भाग्यवान है। कृष्ण के दर्शन कर के लौटनेवाले अक्रूर को देख हम सब लोग भी पवित्र बन जायेंगे। कृष्ण यदि यहाँ आयें तो तुम्हारी मौत निश्चित है। उसको यहाँ बुलाकर तुमने अपनी मृत्यु को ही बुलाया है। अब तुम्हारी मदद करनेवाला कोई न रहेगा। अच्छा होगा, यदि तुम इसी वक्त गोकुल में कृष्ण के पास जाकर उसकी करुणा प्राप्त करके बच जाओ।''

अंधक की सलाह सुनकर कंस असहनीय क्रोध में आया और उसी समय अपने आसन से उठकर सभाभवन त्यागकर चला गया। इस पर अन्य सभासद भी अपने अपने निवास को लौट गये।

अक्रूर के गोकुल पहुँचने के पूर्व ही कंस ने केशि नामक राक्षस को वृन्दावन में भेजा। केशि घोड़े का रूप धारण कर वृन्दावन में पहुँचा। वहाँ पर चरनेवाले पशुओं तथा गोपालकों का वह नाश करने लगा। उस भयंकर आकृतिवाले घोड़े को देखकर सारे गोकुलवासी डर गये। वह घोड़ा पशुओं को चीरकर उनका मांस खाता हुआ और
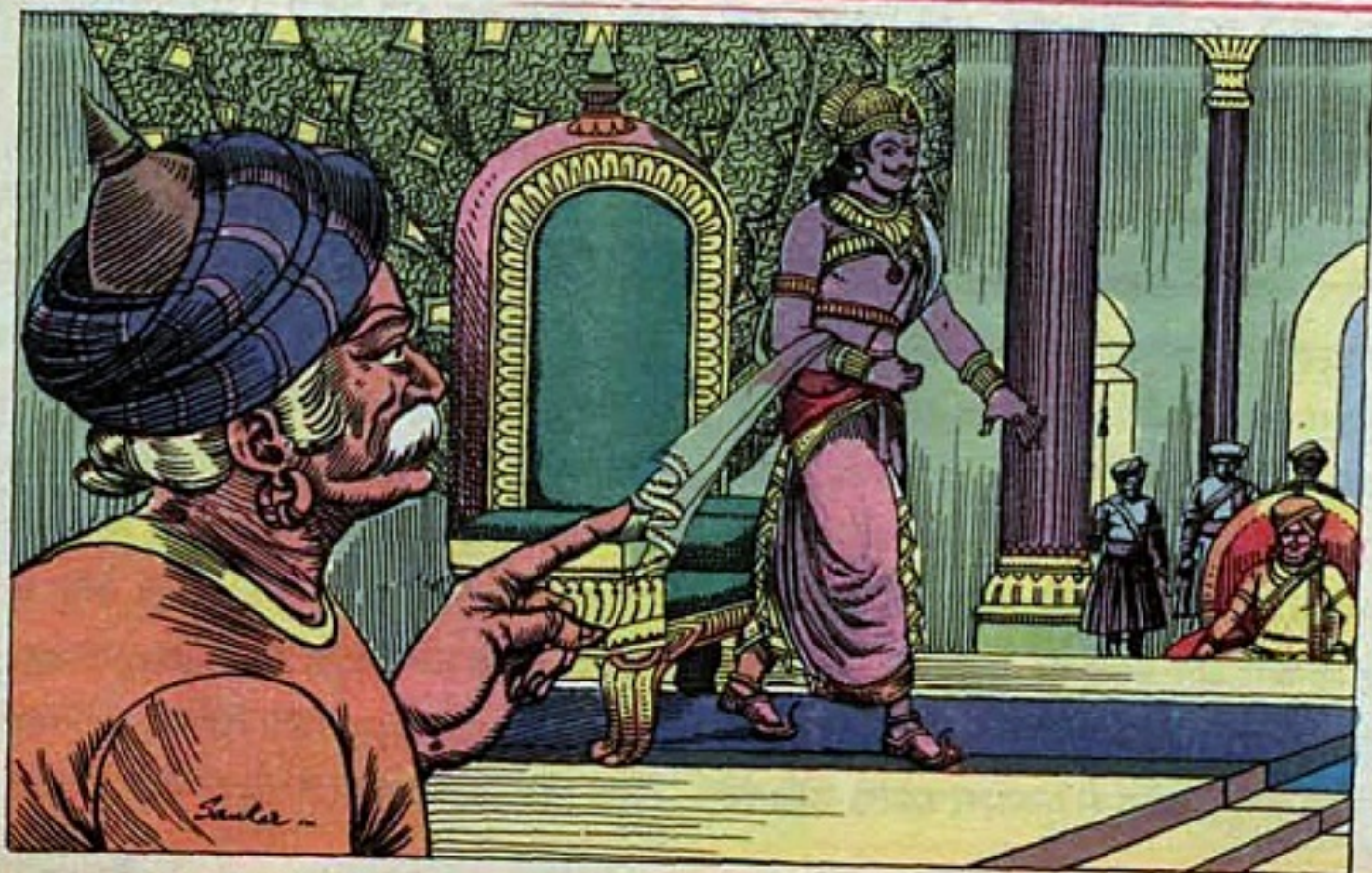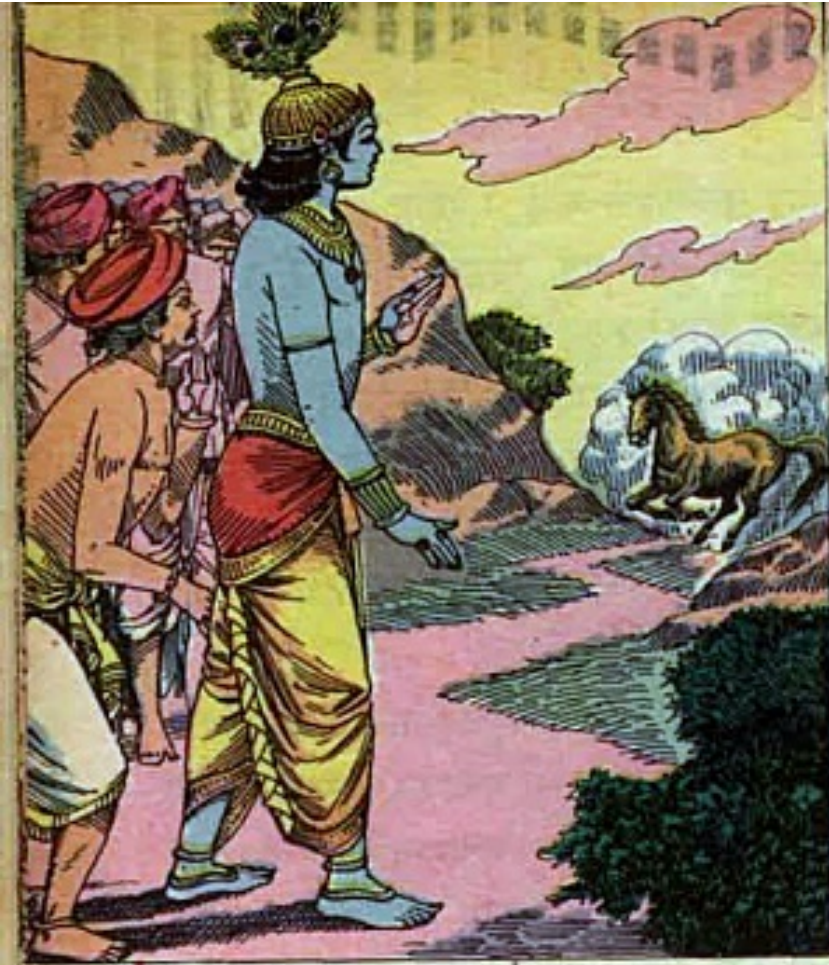
उनका खून पीता हुआ इतस्ततः विचरने लगा। इस प्रकार वन में चरनेवाले सभी पशुओं का उसने सर्वनाश किया। अब वह गोपकों के निवासों की ओर मुड़ा। दूर से ही उसको आते देख गोकुलवासी भयभीत हो कृष्ण के आश्रय में गये। कृष्ण ने उनको अभय प्रदान किया और खुद ज़ोर से तालियाँ बजाकर उसने केशि को भड़का दिया। इस आव्हान से घोड़ा उकसाया गया और कृष्ण को निहत्थे देख उसका उत्साह दुगुना हो उठा। अपना मुँह एक ओर फेरकर अपनी दाढ़ाओं को फैलाकर वह ज़ोर से हिनहिनाया और कृष्ण पर आक्रमण करने उद्यत हुआ। अपनी पिछली टाँगों के बल खड़े होकर अपनी अगली टाँगों से कृष्ण पर हमला करने का पवित्रा उसने भरा। उसकी टाँगें कृष्ण के शरीर पर उतरने से पहले ही कृष्ण विद्युत् गति से थोड़ा पीछे हट गया और उतरनेवाले घोड़े के मुँह में उसने अपना हाथ ठूँसकर उसकी जीभ कसकर पकड़ रखी।

फिर क्या था? घोड़े की सारी उमंग धरी सी रह गयी। वह न तो कृष्ण की पकड़ से अपने को बचा सका न उसको काट ही सका। अंत में लाचार हो ज़मीन पर अपने पैर पटक पटक कर शिथिल हो गिर पड़ा। उसकी आँखें बाहर निकल आयीं। तब कृष्ण ने उसकी जीभ खींच डाली, उसका कंठ चीर डाला, उसके दाँत तोड़ दिये और उसकी बगल में मुक्के मार कर उसकी दारुण हत्या की।

केशि को मरा देख गोकुलवासियों ने आश्वस्त होकर गहरी साँस भरी। सब ने कृष्ण को घेरकर उस का अभिनन्दन किया। गोपियों ने पुष्पमालाएँ पहना कर उसका कंठ भर दिया। उस समय नारद ने अदृश्य रूप में आकाश में रहकर और अपना नाम बताकर कृष्ण से कहा, "वत्स, आप जानते हैं कि मैं कलह-प्रिय व्यक्ति हूँ। इसलिये आपका यह युद्ध देखने में विशेष रूप से देवलोक से आया हूँ। आप ने यह जो पराक्रम दिखाया, वह इन्द्र और शिव के लिये ही संभव है, अन्यों के लिये नहीं। इन्द्र को भी केशि से सामना करना असंभव सा था। ऐसे राक्षस का आपने बड़ी सरलतापूर्वक संहार किया। इसका वध करने के कारण आप 'केशव'
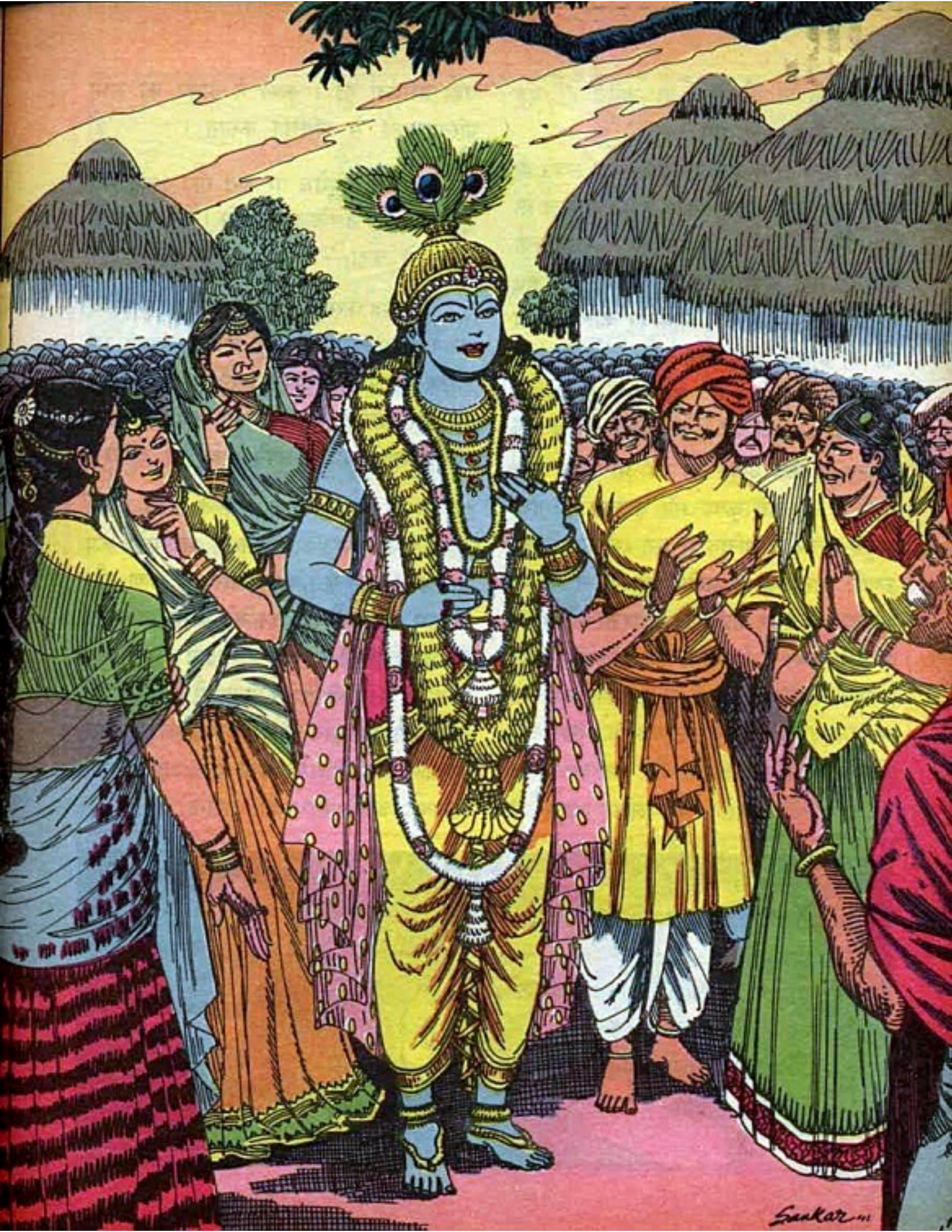
नाम से विशेष लोकप्रिय हो जायेंगे ।" यह कहकर नारद चले गये ।

इस बीच उत्तम अश्व जुते हुए रथपर सवार हो कहीं रुके बिना अक्रूर संध्या समय गोकुल के पास पहुँचा । सूर्यास्त हो चारों तरफ़ संध्याछाया फैल रही थी। अंधकार को तितर-बितर करते हुए चन्द्रोदय हुआ । गोकुल में सर्वत्र कोलाहल हो रहा था । सब लोग गोपों और गायों के नाम लेकर उन्हें पुकार रहे थे । दूध दुहने की आवाज़ें घरघर से आ रहीं थीं । उस कोलाहल से पूर्ण गोकुल के बीच अक्रूर का रथ आ पहुँचा और थोड़ी ही दूर खड़े कृष्ण और बलराम को देख अक्रूर अत्यंत आनन्दित हो झट रथ से उतरकर उनकी ओर बढ़ा । समीप पहुँचने पर अपना परिचय उन्हें देकर अक्रूर ने बड़ी श्रद्धा और भक्ति के साथ कृष्ण के चरणों में प्रणाम किया । कृष्ण ने उस को अपने हाथों से उठाया, उस को आलिंगन कर के कुशल प्रश्न पूछे और कृष्ण-बलराम उसे अपने साथ घर ले गये ।

कृष्ण और बलराम से मिलकर अक्रूर को बड़ी प्रसन्नता हुई । कृष्ण ने अक्रूर को सभी परिवारवालों से परिचित कराया ।

अक्रूर के अनुरोध पर नन्द गोप आदि सब बुज़ुर्ग गोपाल उसके पास आये । उन लोगों से अक्रूर ने कहा—

"महाराज कंस ने अपने धनुष का एक उत्सव मनाने का संकल्प किया है । आप सब स्वयं उस उत्सव में पधार कर अपने अपने शुल्क जमा कर दीजिये । दावतों के लिये दूध, दही, मक्खन, जंगली शहद वगैरह अपने साथ लेते आइये ।

इस उत्सव में सम्मिलित होने के लिये कंसने अपने भानजे कृष्ण और बलराम को विशेष रूप से कहला भेजा है । धनुष-उत्सव में कृष्ण और बलराम की उपस्थिति उन को विशेष वांछनीय है । उन दोनों को लाने की ज़िम्मेदारी उन्हों ने मुझ पर सौंपी है । इसी विशेष कारण से मैं आज यहाँ आया हूँ । आप सब लोग रवाना हो जाइये, मगर इन दोनों को मैं अभी, इसी वक्त अपने रथपर बिठाकर अपने साथ ले जाऊँगा ।"

कछुए की खोपड़ी

पाँच वर्ष पूर्व सूचौ नगर के पश्चिमी द्वार के समीप वेन षी नामक एक व्यक्ति रहा करता था। वह अत्यन्त बुद्धिमान् था। उसने शतरंज, चित्रकला, नृत्य, संगीत, तंतुवाद्य आदि अनेक विद्याएँ सीख लीं और सब में कुशल बना। लेकिन उसके बचपन में किसी ज्योतिषी ने उसकी जन्म-कुंडली जाँचकर भविष्यवाणी की थी, कि वह महान् धनी बन जाएगा। इस कारण उसने धन कमाने का कोई उपाय नहीं किया, बल्कि अपनी सारी संपत्ति लुटाकर शौक से वह अपनी ज़िन्दगी गुज़ारने लगा।

थोड़े ही समय में उसकी संपत्ति के समाप्त होने के लक्षण दिखाई देने लगे। इस बीच उसके समान धनी लोगों ने व्यापार करके अपनी संपत्ति को दुगुना व तिगुना बना लिया। यह देख वेन ने भी व्यापार करना चाहा। मगर दुर्भाग्यवश उसने जो भी व्यापार किया उसे नुक़सान ही उठाना पड़ा।

एक दिन वेन को खबर मिली कि चालीस व्यापारी एक जहाज़ किराये पर लेकर व्यापार करने के लिए समुद्री यात्रा पर जा रहे हैं। फिर क्या था, उसने भी उनको अपने साथ ले जाने का अनुरोध किया। उन व्यापारियों ने इस विचार से वेन को अपने साथ आने की अनुमति दी कि वेन बड़े अच्छे लतीफ़े सुना सकता था। उस के साथ होने से इन दोस्तों की यात्रा मज़े में कट सकती थी और यात्रा में ऊब जाने की नौबत न आती।

वेसे यात्रा में शामिल होने का वेन का उद्देश्य था—नये नये प्रदेश देखना। मगर व्यापारी दल के प्रमुख नेता चांग ने सोचा कि वेन के द्वारा भी थोड़ा माल खरीदवा कर व्यापार कराया जाय। इस विचार से सभी व्यापारियों से उसने अनुरोध किया कि प्रत्येक व्यापारी वेन के लिए थोड़ा-बहुत चन्दा दे। लेकिन अधिकांश व्यापारियों ने उसकी

चीन की लोक कथा

बात नहीं मानी और केवल दस तोले चाँदी ही वसूल हो पायी। चांग ने वह चाँदी वेन के हाथ सौंपकर समझाया, "सुनो वेन, यह चाँदी माल खरीदने के लिए किसी भी रूप में पर्याप्त नहीं है। तुम फल-वल खरीद लो, रास्ते में खाने के काम आयेंगे।" बन्दरगाह में संतरे बिक रहे थे, वेन ने अपनी सारी चाँदी देकर संतरे की कुछ टोकरियाँ खरीद लीं। उन्हें देख अन्य व्यापारियों ने उस की खिल्ली उड़ायी।

कुछ दिन की सफ़र के बाद जहाज़ किसी देश में पहुँचा। वहाँ के एक बन्दरगाह में जहाज़ ने अपना लंगर डाला। सभी व्यापारी उस देश से भली भाँती परिचित थे। उनका माल उस देश में नौ दस गुना अधिक दाम में बिकता था और इसी प्रकार उस देश में खरीदा माल ज़यादा दाम में बिकता था। इसी कारण अपने प्राणों की बाजी लगाकर चीन के व्यापारी इस प्रकार की समुद्री यात्रा करते थे। जब बाकी व्यापारी अपने अपने माल के साथ जहाज़ से उतर पड़े तब वेन को अपने संतरों की याद आयी। उन व्यापारियों ने उस के संतरों की अवहेलना की थी। इसलिए वेन ने उस यात्रा के दौरान संतरों की याद तक नहीं की थी। अब मौक़ा पाकर उसने वे टोकरियाँ इस विचार से ऊपर निकलवायीं की संतरे कहीं सड़ तो नहीं गये हैं! उसने टोकरियाँ जहाज़ के ऊपरी भाग पर करीने से सजवा दीं। फल तो अच्छे दिखाई दे रहे थे। स्वाद लेने के लिए वह एक फल का छिलका उतारकर एक एक फाँक मुँह में डालने लगा।

बन्दरगाह के कर्मचारी और अन्य जो लोग उस समय वहाँ थे, वे सब उन लाल-लाल, चमकनेवाले फलों को विस्मय से देखने लगे। वे अब यह भी समझ गये, कि वे फल खाये जाते हैं। उन में से एक ने एक वज़नदार चाँदी का सिक्का निकालकर वेन के हाथ में देते हुए एक फल देने का इशारा किया। फल देकर उसने वेन के किये अनुसार उसका छिलका उतारा और एक एक फाँक निकालकर खाने के बदले पूरा का पूरा फल ही एक साथ मुँह में ठूँस दिया। उसे चबाकर रस पी लिया और सारा थोथा और बीज बाहर निकालकर फेंक दिया। उसको फल का स्वाद बड़ा अद्भुत लगा। इसके बाद और दस

सिक्के वेन को देकर वह दस फल ले गया ।

इस के बाद संतरे ख़रीदने लोग टूट पड़े । थोड़ी ही देर में आधे फल तो बिक गये, तब बाकी के आधे फल उसने दो दो सिक्के दामपर बेच दिये ।

इस बीच अन्य व्यापारी अपना माल बेचकर जहाज़ पर लौट आये । वेन के व्यापार की बात सुनकर वे बोले, "तुम तो बड़े भाग्यवान हो। यहाँ का कुछ माल खरीद लोगे तो चीन में उसे ज़्यादा दाम पर बेच सकोगे ।" पर वेन यह सोचकर संतुष्ट हुआ कि उसे अपनी किस्मत तो प्राप्त को गयी है । अब तक चाँदी उसने हासिल की थी, वह कम नहीं थी ।

इसके बाद व्यापारियों को अपना सारा माल बेचने व वहाँ से नया खरीदने में कोई पन्द्रह दिन लगे । इस के बाद वे लोग फिर जहाज़ पर चढ़कर वापसी यात्रा के लिये चल पड़े । कुछ दिन बाद यात्रा के दौरान समुद्र में भारी आँधी उठी । जहाज़ के कप्तान को जहाज़ पर काबू पाना मुश्किल हुआ । आखिर जहाज़ एक निर्जल टापू में पहुँचा; आँधी रुकने तक वहीं ठहरने के विचार से उन लोगों ने लंगर डाल दिया ।

वेन टापू देखने निकल पड़ा तो सब ने उसका उत्साह भंग करना शुरू किया, "इस निर्जन टापू में देखने के लिये है ही क्या ?" फिर भी वह अकेला चल पड़ा । उस टापू के बीच एक मध्यम उँचाई की पहाड़ी थी । उस पर उगी बेलों के सहारे रेंगता हुआ वेन पहाड़ी पर पहुँचा । उसने चारों तरफ़ नज़र डाली, तो देखता है—चारों बाजुओं में फैला हुआ पानी ही पानी था । इसी बीच वहाँ घास में पड़ी एक विचित्र वस्तु उसने देखी । निकट जाने पर उसे मालूम हुआ कि वह वस्तु एक विशाल कछुए की खोपड़ी थी ।खोपड़ी एक पलंग के जितनी बड़ी थी । वेन यह सोचकर आश्चर्य में आया, "ओह, कहीं कछुए इतने बड़े भी होते हैं ? मैं अगर लोगों से कहूँ तो कोई विश्वास ही नहीं करेगा । सूचौ के वे व्यापारी मुझे केवल बातूनी आदमी समझेंगे । इसे साथ ले जाकर ही दिखाना चाहिये । और सिवा इसके, इसे अपने घर ले जाकर सीध में कटवा लूँ तो चार चार पैर लगवाकर दो पलंग बन जायेंगे ।" इस प्रकार विचार करके वेन कछुए की उस खोपड़ी

को कपड़े के छोर से बाँधकर बन्दरगाह तक खींच लाया । कुछ लोगों ने शिकायत की, कि इसे चीन ले जाना बेकार बोझ मात्र है । कुछ लोगों ने सुझाया कि यह कुछ बीमारियों के इलाज के काम आ सकता है । पर वेन ने सब को सम्बोधित करते हुए कहा, "आप सब लोग कुछ न कुछ विदेशी माल ले जा रहे हैं न ? तो यह मेरा विदेशी माल होगा । इस में फर्क इतना ही है कि आप सब ने दाम देकर माल खरीदा है, जब कि मैं ने अपने इस माल के लिये कौड़ी तक खर्च किये बिना मुझे यह प्राप्त हुई है ।"

दूसरे दिन आँधी बिलकुल थम गयी और जहाज़ ने लंगार उठाया । जब वह चीन के तट पर पहुँचा तब व्यापारियों के दलाल वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने उस जहाज़ में आये व्यापारियों को स्थानीय व्यापारियों के पास ले जाने के लिये अपने यहाँ निमंत्रित किया । इस संदर्भ में वेन तथा उसके अनुचर एक ईरानी व्यापारी को देखने गये । उसका नाम था अबू हसन । उसने अपने मेहमानों के लिये भारी दावत का इंतज़ाम किया ।

ऐसी दावतों में अतिथियों को बिठाने का एक ख़ास इन्तज़ाम होता था । जो अत्यन्त मूल्यवान सामान लाता है उसके लिये बैठने के लिये सब से ऊँचे और पहले आसन का इन्तज़ाम किया जाता है । और यथाक्रम सब से हल्के सामान वाले को पंक्ति के छोर पर बिठाया जाता है । व्यापारियों के लिये उचित आसनों का निर्णय करने के लिये ईरान के व्यापारी ने माल की फेहरिश्त की जाँच करना आरम्भ किया । पर वेन के पास कोई फेहरिश्त न थी; इसलिये उसको पंक्ति के छोर पर बिठाया गया ।

दूसरे दिन ईरान का व्यापारी जहाज़ के पास माल देखने पहुँचा । उसने जहाज़ पर सवार होते ही ऊपरी भाग पर लुढ़की पडी हुई कछुए की वह खोपड़ी देखी । आश्चर्य में आकर उसने पूछा, "यह अमूल्य माल किसका है ? क्या इसे किसी को बेच दिया गया है ?"

अन्य व्यापारियों ने उस को बताया कि वह माल वेन का है ।

अब क्या था, ईरानी व्यापारी के मुखमण्डल पर एक साथ व्यथा और क्रोध प्रकट हुए । उसने गरजकर कहा, "आप लोग इतने वर्षों से मेरे

साथ व्यापार करते आये हैं, फिर भी इस बुज़ुर्ग की बात छिपाकर इसको दावत की पंक्ति में एक छोर पर बिठा दिया। मुझे सब से पहले उसकी क्षमा माँगनी चाहिये। आप लोगों का माल खरीदने की बात मैं बाद में सोचूँगा।'' यह कहकर वह वेन को साथ लेकर तटपर पहुँचा।

अबू हसन वेन को अपनी दूकान में ले गया, उसको वहाँ बिठाकर फिर लौट आया। और बाद में अन्य लोगों को अपने साथ ले गया। इसके बाद उसने सब के सामने वेन से पूछा, ''क्या आप इस कछुए की खोपड़ी को बेचना चाहेंगे ?''

वेन कोई अबोध व्यक्ति न था। उसने बड़ी चालाकी से उत्तर दिया, ''अच्छा भाव मिला, तो इसे बेचने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है।''

वेन ने चाँग से परामर्श किया। दोनों ने गुप्त रूप से बात की।

अन्त में चाँग ने हसन से मज़ाकी ढँग से कहा, ''वेन का उद्देश्य दस हज़ार रुपये माँगने का है।''

''इस का मतलब है कि वे इसे बेचना ही नहीं चाहते हैं।'' हसन ने कहा।

व्यापारियों को अब मालूम हुआ कि कछुए की खोपड़ी एक अत्यन्त कीमती वस्तु है। चाँग ने हसन को वेन की सच्ची कहानी सुनायी और कहा कि हसन ही स्वयं उस वस्तु का मूल्य निर्धारित करें। हसन ने पचास हज़ार तोला चाँदी देकर वह कछुए की खोपड़ी खरीद ली। यह रकम भी वैसे उसके मूल्य से कम ही थी। कहा जाता है कि कछुए की इस तरह की खोपड़ी में एक इंच व्यास के अमूल्य मोती भरे होते हैं। चाहे जो हो, वेन के दुर्दिन दूर हो गये। अब वह एक धनी आदमी बन गया। कछुए की खोपडी ने उसे मालामाल कर दिया। उस की ग़रीबी दूर हो गयी। अब उस को किसी बात की कमी न रही। वेन ने बाद में एक सुन्दर लड़की के साथ विवाह किया और वह शीघ्र ही वहाँ के बड़े व्यापारियों में एक गिना जाने लगा। इसके बाद अनेक वर्षों तक उसने सुखपूर्वक अपना जीवन बिताया।

(गतांक से आगे)

यहाँ तक कहानी सुनाकर सौदामिनी ने पिता से कहा— "पिताजी, क्या कनकप्रभा को कौडिण्य देश के युवराज के साथ विवाह करना होगा ? या राजशेखर के साथ ? अथवा गंधर्व के साथ ? यह तो स्पष्ट है कि यह बात विवादों का कारण बन गयी । माँ और बेटी ने अलग अलग युवक को वर के रूप में चुन लिया है । इस हालत में कनकप्रभा किसके साथ विवाह करे ? तीन वरों में से किसके साथ विवाह करे ? यही इस कहानी की समस्या है ।

मेरे साथ विवाह करने के लिये जो व्यक्ति आये उसको आप यह कहानी सुनाइए और उस का समाधान मुझे बता दीजिए । तब मैं अपना उत्तर सुनाऊँगी कि उन में से किस का समाधान ठीक है ।"

राजा अनंगवर्मा अपनी जिज्ञासा को रोक नहीं पाये । उन्होंने कहा— "बेटा, तुम ने जो कहानी सुनायी, उसमें कनकप्रभा गंधर्व के साथ विवाह कर लेती है न ?"

मुसकुराते हुए ने सौदामिनी ने अपनी अस्वीकृति प्रदर्शित की ।

"तो फिर किस के साथ ?" अनंगवर्मा कुछ और कहने ही जा रहे थे, कि उन को टोक कर सौदामिनी ने कहा—"पिताजी, इस का समाधान तो आपके होनहार दामाद देंगे । लेकिन पिताजी, तीनों वरों में से केवल किसी एक का नाम बताना काफ़ी नहीं है, उस का अच्छा-सा समाधान भी पेश करना होगा । कोई एक नाम लेना तो सरल काम है । उसे कोई भी कर सकता है । कनकप्रभा ने उसी को क्यों चुना उसका उचित समाधान देना होगा । यह एक समस्या है । इस का हल बताना ऐरे गैरे का काम नहीं । जो सचमुच विचारशील

लक्ष्मी रॉय

है, वही उसे बता पाएगा। पिताजी, आप को इस पर सर खपाने की ज़रूरत नहीं है। उसे अपने होनेवाले दामाद पर सौंपिये। दशमग्रह (दामाद) की यही सच्ची परीक्षा है।"

ऐसे में कुछ महीने बीत गये। सौदामिनी की कहानी कई लोगों ने सुनी, लेकिन किसी ने भी संतोषजनक समाधान नहीं दिया। इसी वजह से अनंगवर्मा अपनी बेटी के विवाह के बारे में चिंतित रहने लगा। वह सोचने लगा—सौदामिनी की कहानी में जो समस्या है उसका संतोषजनक समाधान आख़िर कौन देगा? यहाँ कई आये, किसी ने ठीक समाधान नहीं दिया। पता नहीं, इस समस्या का सही हल बतानेवाला कोई होगा कि नहीं! क्या तब तक मैं अपनी लाड़ली बेटी को कुँआरी रखूँगा?

इस बीच अनंगवर्मा के दूर के रिश्तेदार विचित्रसेन के सुपुत्र चन्द्रहास आ पहुँचे। विचित्रसेन जयन्त देश के राजा थे और उन्होंने चन्द्रहास के हाथ एक पत्र भेजा था।

उस पत्र में लिखा था—"मेरे प्रिय बन्धु अनंग, तुम जानते हो, तीन पीढ़ियों पूर्व पड़ोसी देश बल्हण के साथ युद्ध कर के मेरा राज्य पराजित हुआ और बल्हण का सामन्त राज्य बन गया। बल्हण का वर्तमान राजा विकर्ण अपने पूर्वजों से भी कहीं ज़्यादा क्रूर तथा कुत्सित प्रकृति का है। वह मुझे राजगद्दी से उतार कर मेरे राज्य को अपने राज्य में मिलाने की कोशिश कर रहा है। मैं अब वृद्ध हो चुका हूँ। यथासंभव शीघ्र चन्द्रहास का राज्याभिषेक करना चाहता हूँ। चन्द्रहास को विकर्ण के षड़यंत्रों पर बड़ा ही क्रोध

अनंगवर्मा ने कहा— "जान कर भी तुम क्या कर सकोगे ?" फिर अनंगवर्मा ने सौदामिनी की बताई कहानी चन्द्रहास को सुना दी और कहा— "अब तक जो लोग आए, उन्होंने तीन वरों में से एक का नाम बताया ज़रूर, पर सौदामिनी के मनपसंद वर का विवरण देनेवाला कोई नहीं मिला ।"

"शायद मैं सौदामिनी पसंद करे ऐसा जवाब दे सकूँगा ।" चन्दहास ने दिलासा दिया ।

यह सुनकर अनंगवर्मा को बहुत खुशी हुई और उस से अधीर हो पूछा— " बेटा, इससे बढ़कर मुझे और क्या चाहिए ? बताओ तुम्हारा विवरण ।"

कुछ देर तक मौन रहकर चन्द्रहास ने निवेदन किया— "कोई कन्या अपनी पिता की निजी संपत्ति कभी नहीं होती । चक्रसेन ने विश्वम्भर से दाँव लगाकर कनकप्रभा को दाँव पर रखा । पर जो अपनी संपत्ति नहीं है, उसे दाँव पर लगाने का चक्रसेन को न्यायोचित अधिकार नहीं है । इस लिए कोण्डिण्य देश के युवराज को कनकप्रभा के साथ विवाह करने की इच्छा नहीं है । चक्रसेन का वचन धर्म या न्याय-सम्मत नहीं है ।

अब रही बात वरुणदत्त की । वह कनकप्रभा के सौंदर्य पर मोहित हो उस के साथ विवाह करने का तैयार हुआ है । कनकप्रभा नारी-सुलभ भावनाओं के वश होकर गंधर्व के मुँह अपनी प्रशंसा सुनकर उससे विवाह करने के लिए तैयार हो गयी । उस ने आगे-पीछे की समस्याओं का

है । सेना को संगठित कर के वह बल्हण देश पर चढ़ाई करना चाहता है । इसी लिए वह पहाड़ी व जंगली जाति के युवकों को सेना में भर्ती कर उन्हें अच्छा प्रशिक्षण दे रहा है । चन्द्रहास को मैं ख़ास उद्देश्य से तुम्हारे भेज रहा हूँ । बल्हण देश पर हमला करने के अनुष्ठान में कुछ सैनिक तथा आर्थिक सहायता तुम कर सकोगे ?"

अनंगवर्मा पत्र पढ़कर बहुत ही खुश हुआ । उस ने चन्द्रहास से कहा— "बेटा, सैनिक और आर्थिक सहायता मैं तुम्हें अवश्य दूँगा । इतने विशाल राज्य और संपत्ति के होते हुए आजकल मैं एक बड़ी जटिल समस्या में उलझा हूँ ।"

"क्या मैं आप की समस्या को जान सकता हूँ ?" चन्द्रहास ने सवाल किया ।

विचार नहीं किया । अतः इन दोनों के बीच मानसिक पवित्रता न होने के कारण यह विवाह न्याय-संगत नहीं प्रतीत होता ।

कनकप्रभा की माँ ने अपनी पुत्री के लिए राजशेखर को उचित वर माना और उसे अपना दामाद बनाने का निश्चय किया । साथ ही कनकप्रभा की इच्छा जानने के विचार से उस ने राजशेखर से विवेकपूर्वक कहा— "यदि मैं दे सकूँ तो अपना अमूल्य सुवर्ण प्रदान करूँगी ।" अपनी लड़की की भलाई की इच्छा से सुयोग्य वर का चुनाव उसने किया । यह रिश्ता सर्वोत्तम और न्याय-संगत माना जा सकता है । इस लिए कनकप्रभा का राजशेखर के साथ विवाह करना सर्वथा उचित है ।

चन्द्रहास का वचन सुनकर अनंगवर्मा को आश्चर्य और संतोष हुआ और उसने यह समाधान सौदामिनी के पास भेजा ।

थोड़ी देर में सौदामिनी की एक सखी उसके पालतू तोते के साथ एक पुष्पमाला लिये आ पहुँची । उस ने चन्द्रहास से कहा— "सौदामिनी ने नतमस्तक हो आप को शतशः प्रणाम भेजे हैं, आप का भेजा समाधान सखी सौदामिनी को पसंद आया । सर्वोत्तम और न्यायसंगत रिशते के बारे में आप ने जो निवेदन किया, वह आप की विवेक-कुशलता का परिचायक है । आप के समाधान पर सौदामिनी को प्रसन्नता है और उस को आप से विवाह करना स्वीकार है । इस तोते के द्वारा अपनी ओर से आप के कंठ में यह पुष्पमाला पहानाने को कहला भेजा है ।"

सखी के आदेश पर तोते ने चन्द्रहास के कंठ में पुष्पमाला पहना दी । अनंगवर्मा परम प्रसन्न हुए । इस के बाद चन्द्रहास और सौदामिनी का विवाह बड़ी शान से संपन्न हुआ ।

कुछ दिन बाद चन्द्रहास ने अपनी ससुर की सेना लेकर राजा विकर्ण पर आक्रमण किया और उस को पराजित किया । चन्दन, जयंत और बल्हण तीनों राज्यों के राजा बन कर कई वर्षों तक सुखपूर्वक अपना जीवन बिताया ।

पत्नी के योग्य पति

किसी गाँव में दामोदर और रमाबाई नाम के एक दंपति रहा करते थे। दामोदर सबेरे उठकर खेत में चला जाता और शाम को लौट आता था। रमाबाई घर में ही रहकर घर के कामकाज़ के साथ अपने पालतू मुगे व मुर्गियों की देखभाल भी करती थी। यह मुर्गीपालन उस का शौक था। इस लिये सारे ग्रामवासी अपनी अपनी मुर्गियों को पालने के लिये रमाबाई के हाथ सौंप देते थे और उनके चूज़े बड़े हो जानेपर उनको ले जाते समय दो मुर्गियाँ रमाबाई को खर्चे के रूप में दे जाते थे। इस प्रकार रमाबाई के पास पच्चीस-तीस मुर्गियाँ जमा हो गयी थीं।

दामोदर को मुर्गी का मांस बहुत पसंद था। उसने कई बार अपनी पत्नी से अनुरोध किया कि वह एक मुर्गी पकाकर उसे खिला दें। लेकिन रमाबाई मुर्गी काटने से साफ़ इनकार करती रही।

दामोदर ने खूब सोचकर एक तरकीब ढूँढ़ निकाली। उसने एक दिन अपनी पत्नी से कहा, "अरी रमा, कल मुझे एक स्वामीजी मिले। हमारे खेतों में इन दिनों अच्छी फ़सल नहीं हो रही है न? मैं ने उनसे इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा, "तुम ने देखा है? हमारे गाँव के छोर पर पीपल का एक पेड़ है। कहा जाता है कि उस पेड़ के खोंड़र में फसलों का देवता रहता है। उसे खुश करने के लिए प्रति दिन उस खोंड़र में पकाया हुआ एक मुर्गी का मांस रखकर पीछे मुड़कर देखे बिना घर लौटना होगा। इस प्रकार लगातार एक महीना भोग चढ़ाने से फसलों का देवता हम पर अनुग्रह करेंगे और हमारे खेतों में अच्छी पैदावार होगी।"

यह समाचार सुनकर पहले तो रमाबाई ज़रा घबड़ा गयी। फिर देर तक सोचकर उसने अपने मन को सांत्वना दी कि, इसके परिणाम में अच्छी फसल होगी। और उसने अपने पति के सुझाव

२५ वर्षपूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी

का पालन करने का निश्चय किया ।

उस दिन से वह नियमित रूप से हर रोज़ एक मुर्गी काट देती, उससे मसालेदार व्यंजन बनाकर चावल के साथ उसको ले जाकर पीपल के पेड़ के खोखले में रख देती और पीछे मुड़कर देखे बिना घर लौट आती थी ।

रमाबाई के खाना रखकर लौटते ही, पहले से पेड़पर बैठा दामोदर पेड़पर से नीचे उतर आता और खोंड़र से मांस व भात निकाल कर भरपेट खाकर डकार भरता हुआ खेत की ओर चला जाता था । मनपसंद मुर्गी का मांस खाकर उसे बड़ा संतोष होता ।

इस प्रकार एक महीना होने को आया । रमाबाई ने अंतिम मुर्गी काटी, पर पति के बताये शस्य-देवता का कोई अनुग्रह होते नज़र नहीं आया ।

रमाबाई के मन में शंका हुई कि इस देवता के पीछे कोई धोखा है । इसलिये उस दिन भोजन पेड़ के खोखले में रखने के बाद रोज़ की भाँति बिना पीछे देखे लौटने के बदले वह थोड़ी दूर जाकर एक पेड़ के पीछे छिप गयी और इस विचार से इंतज़ार करने लगी कि देखें, आखिर क्या होता है ।

अब क्या था, रोज़ की तरह दामोदर पेड़ से उतर कर पेड़ के खोखले से भोजन निकाल कर बड़े मज़े से खाने लगा । आज व्यंजन बड़ा स्वादिष्ट बना था । इस लिये दामोदर ने बड़े संतोष के साथ खाना खाकर लंबी डकार भरी । यह तमाशा देख रमाबाई झल्ला उठी । दौड़कर अपने पति के पास पहुँची और तबतक उसे पीठ पर
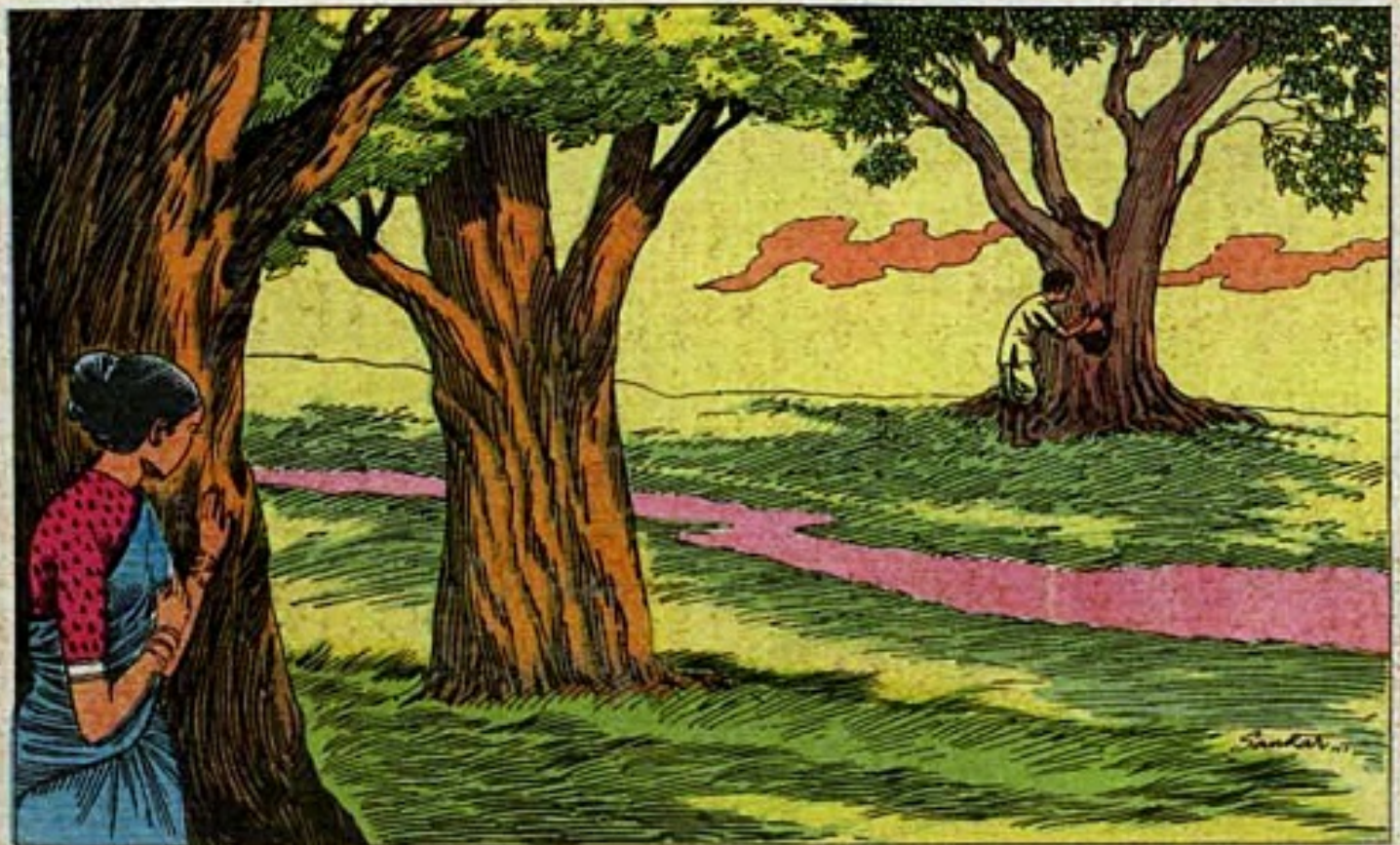
पीटती रही, जब तक उसके हाथ नहीं दुखे। फिर जी भरकर उसे गालियाँ सुनायीं और उसे यह कहकर घर लौट आयी कि, अब इस मर्द के साथ गृहस्थी निभाना उसके लिये मुमकिन नहीं है।

इसके बाद रमाबाई अपने मायके जाने की तैयारी में लगी। अपने कपड़े वगैरह एक बड़े झाबे में रखकर वह अड़ोस पड़ोस की महिलाओं से बिदा लेने चली गयी।

अपनी पत्नी के पीछे थोड़ी देर बाद दामोदर भी घर लौट आया। उसने अपनी पत्नी की चाल भाँप ली और रमाबाई ने पीहर जाने के लिये जिस में कपड़े वगैरह रखे थे, उसी झाबे में वह भी छिपकर बैठ गया।

रमाबाई को विदा करने पड़ोसवाली महिलाएँ आ पहुँची। रमाबाई अपने घर की ओर अंतिम बार देखकर रो पड़ी और झाबा अपने सिरपर रखवाकर अपने मायके चली गयी।

मायके पहुँचकर उसने अपनी माँ को पति के करतूत का सारा वृतान्त सुनाया और फूट फूट कर रो पड़ी। माँ ने रमाबाई को सांत्वना देकर समझाया, "बेटी, रो मत। आज से तुम्हें उसका चेहरा देखने की भी ज़रूरत नहीं। यहीं मेरे घर रह जाओ।"

इसके बाद कुतूहलवश उसने झाबे का ढक्कन निकालकर भीतर देखा, इस ख़याल से कि देखें बेटी अपने साथ नया क्या ले आयी है। तभी दामोदर झाबे से उछलकर बाहर कूद पड़ा और हँसते हुए बोला, "माताजी, मैं हूँ—आपका दामाद! आप के दर्शन के लिये आया हूँ। बाकी सारी बात लड़की ने बता दी है।"

यह देख सास गुस्से में आ गयी। उसने सोचा कि उस के घर डेरा डालने के लिये बेटी और दामाद की यह कोई चाल है। उसने दोनों को घर से बाहर निकाल दिया और गरज कर चेतावनी दी कि—वे दोनों कभी भी उस से घर में कदम नहीं रख सकते!

रमाबाई ने विवश होकर अपने पति के साथ ही गृहस्थी चलाने का निश्चय कर लिया और पुनः उसके साथ अपने घर लौट आयी।
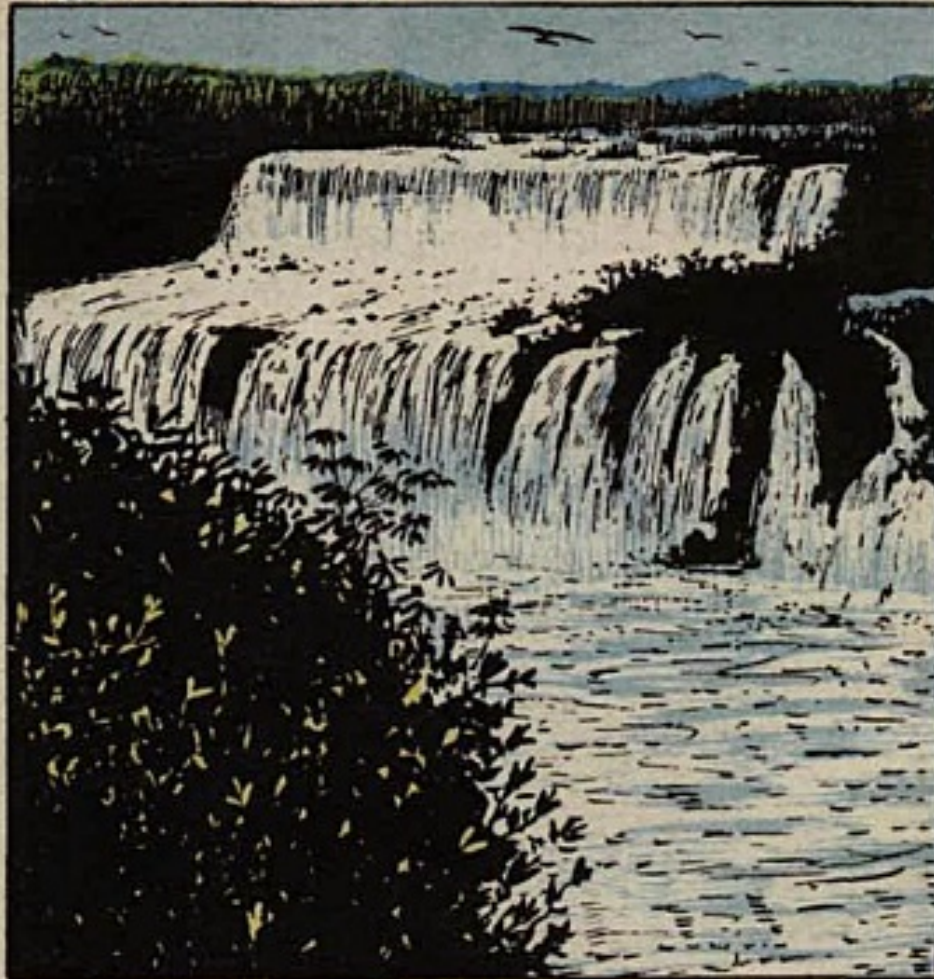
जलप्रपात

ब्राझील और अर्जंटाइना की सीमापर स्थित इगुवाकू जल-प्रपात में वर्षाऋतु के दौरान ८० दिन तक प्रति सेकंद १६७,५०० घनफूट जल नीचे की ओर प्रवाहित होता है। इस जलप्रपात के नीचे स्थित नदी अब तक दो बार जल-प्रपात की ऊँचाई तक (२५० फुट) उफन कर प्रवाहित हुई है।

जल में मेंढ़क

दक्षिण आफिका से संबंधित; एक प्रकार का नाखूनवाला मेंढ़क करीब करीब अपने जीवनपर्यंत पानी के भीतर ही ही रहता है। इस किस्म के मेंढ़कों की पिछली टाँगों में नाखून होते हैं। इनकी मदद से ये मेंढक अपना आहार संपादन करते हैं।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त १९८८ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

P. S. Rajagopal

A. V. Rangaiah

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जून १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

अप्रैल के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : **रहो सदा मिलकर!**

द्वितीय फोटो : **फूलों जैसे खिलकर!!**

प्रेषक : **प्रेम किशोर,** मानिकपुर-४९६ ५५१ रायगढ़ (म. प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास -६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

मैगी फ़न बुक!
Look out for the 'FUN WORLD CONTEST' inside!
MAGGI
FUN BOOK
मैगी नूडल्स के
2 खाली पैकेटों
के बदले में!
अपने नज़दीकी विक्रेता से सम्पर्क करें अथवा
कूपन को इस पते पर भेजें:
मैगी फ़न बुक
पोस्ट बैग-9
नई दिल्ली-110 001
Join the MAGGI Club! Details inside
मनोरंजक खेल, मैगी क्लब, रोचक पहेलियां...और बहुत कुछ!
अपनी प्रति आज ही लीजिए!
MAGGI
2-Minute noodles
with MASALA
TasteMaker inside
100% VEGETARIAN
Fast to cook! Good to eat!
मेरा नाम
मेरा पता
MAGGI
2-Minute noodles
पल भर में तैयार! खाने में मज़ेदार

मधुर पल की
मधु मुस्कान

nutrine
Chocolate
Eclairs

CHANDAMAMA (Hindi) JUNE 1988 Regd. No. M. 5452

चुस्कियाँ लीजिए, चटखारे लीजिए, फेंटकर लीजिए, खा लीजिए...

...या बस, गटागट पी लीजिए.

लीजिए पेश है रसना की नयी भेंट, जो सॉफ्ट ड्रिंक से भी ज़्यादा मज़ेदार है – शाही गुलाब, कूल ख़स, केसर इलायची और मैंगो राइप – रसना के चार प्रीमियम उत्पादन... चार प्रीमियम स्वाद ताकि आप बना सकें झाग़वाला मिल्क शेक, ज़ायकेदार आइस क्रीम, स्वाद भरी लस्सी. प्यास बुझाने वाले रसना जैसे ही मज़ेदार.

जी हाँ, रसना के इन चार प्रीमियम स्वाद को आज़माइए और जी भर के रसना पीजिए, पिलाइए... खाइए, खिलाइए.

रसना प्रीमियम स्वाद

■ शाही गुलाब ■ कूल ख़स ■ केसर इलायची ■ मैंगो राइप

भा र त • का • स र्वा धि क • बि क ने वा ला